पतिव्रता अरुन्धती

(एक पौराणिक उपाख्यान) ।

लेखक—

जगदीश झा "विमल"

प्रकाशक

एस. आर. बेरी एण्ड कम्पनी

२०१, हरिसन रोड, कलकत्ता

प्रथम संस्करण १०००	सम्वत् १९८०	मूल्य ॥=)

प्रकाशक—

आर० आर० बेरी,

२०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

मुद्रक—मुन्शी हरिहरलाल।

"श्रीहरि प्रेस"

२०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

प्रेमोपहार

परिचय

एकाङ्गी शिक्षाने स्वर्ग सहोदरा भारत वसुन्धराके भीषण ह्रासमे विशेष सहायता पहुँचायी है। जबसे आर्य देवियां शिक्षा सूर्यसे भी पर्देमें रक्खी जाने लगीं तभीसे समाजकी दर्दनाक दुर्गति होने लगी। सामाजिक कुरीतियाँ रक्तबीज सन्तानकी भांति दिन दूनी और रात चौगुणी बढ़ती हुई देशको अधः-पतनावस्थाकी चरम सीमा तक घसीट ले गयीं। आर्य देवियोंके हृदय मन्दिरसे दया, धर्म, प्रेम, भक्ति, सदाचार, अतिथि सेवा और पातिव्रत्य बाहर निकलते गये और इनके स्थानपर फूट, द्वेष, कलह, कुटिलता और अनाचारने अधिकार जमाया, उन्नत पथमे क्रान्तिने रोड़ा अड़ाकर परिस्थिति बड़ी भीषण कर दी। भारतियोंके शरीरको स्वतंत्रताने त्यागकर शिथिल कर दिया। लोग अपने पैरों भी खड़े नहीं रह सके, गुलामीने गुहार मचायी, भारतीयोंके हृदयपर उसने अपना घर बना लिया।

प्रकृतिके नियमानुसार परिवर्त्तन होना अनिवार्य है। संसारमें सर्वदा किसीकी अवस्था एकसी नहीं रही है, इसी नियमके अनुसार देशकी काया पलटनेका समय आन उपस्थित हुआ। सुधी समुदाय नेताओंका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। बस क्या था सदियोंसे सांकल चढ़ी हुई आर्य देवियोंके शिक्षाका द्वार सहसा खुल गया, उसके आगेकी जबरदस्त दीवार तोड़ दी गयी।

मनुष्यमात्र आदर्शको आगे रख कार्य क्षेत्रमें अग्रसर होनेही पर सफलताकी आशा रखते हैं और है भी यथार्थ। इसी उद्देशको आगे रखकर मैं सती सुकन्या, सती सीता प्रभृतिके पावन जीवन चरित्रकी भांति इसबार इस छोटी सी पुस्तकमें पतिव्रताओंकी पूजनीया भगवती अरुन्धतीका पुनीत चरित्र चित्रित कर पाठक पाठिकाओंके आगे रखने आया हूँ, आशा है मेरी अन्य कृतियोंकी भांति वे इसे भी अपनाकर मेरे परिश्रमको सफल करेंगे।

भगवती अरुन्धतीका आदरणीय चरित्र आदिसे अन्ततक अलौकिक और अनुकरणीय है। वे क्षमा, दया, शांति और पातिव्रत्यका प्रति रूपही समझी जाती हैं।

प्रस्तुत पुस्तक छोटी छोटी बालिकाओंके लिये लिखी गयी है। इसीलिये इसकी भाषाकी सरलतापर विशेष ध्यान दिया गया है; सफलताकी जांच सुविज्ञ समालोचकोंपर निर्भर है।

इस छोटी सी पुस्तिकाके लिखनेमें कालो पुराणसे मुझे सहायता मिली है। अतएव उन ग्रन्थकार महाशयका आभारी हूं।

साहित्य-सदन
जमालपुर
१ ६-२३

विनीत—
"विमल"

पतिव्रता अरुन्धती।

पौराणिक युगका कथानक है। भोरका समय था। भगवान भास्कर उदयाचलकी ओटसे झांकी लेनेका विचार कर रहे थे। प्रातःकालका शीतल समीर सुमनके सत्संगसे वन उपवनोंको सौरभित कर रहा था। चिड़ियोंकी सुरीली चहकारसे वन सजीव सा परिभासित होता था। अलबेले अलिवृन्द विकसित सुमन समूहोंपर मड़राते दीख पड़ते थे। देखते-ही-देखते पर्वतकी ऊँची चोटियाँ दिवाकरकी लाल किरणोंसे अनुरंजित हो उठीं। देव नदी चन्द्रभागा कल-कल नादसे प्रवाहित होरही थी। उसकी चंचल तरंग समूहोंपर प्रभाकरकी लाल किरणें अठखेलियां करती हुई उस अलौकिक शोभामे संजीवनी घोल रही थी। उसी सुहावने समयमें महर्षि वशिष्ट चन्द्रभागाके किनारे पर्वत-मालाकी चौरस चोटीपर घूम रहे थे। प्रातःकालके उस स्वर्गीय सौन्दर्यको देखते हुए वे कुछ आगे बढ़नेकोही थे कि सहसा उनकी दृष्टि एक अपूर्व सुन्दरी युवतीपर पड़ी। निर्जन वनमें अद्वितीय रूप-

वती युवतीको देख वे उसका समाचार मालूम करनेके लिये उत्कण्ठित हो उठे, और इसी विचारसे धीरे धीरे युवतीके आगे उपस्थित हो बोले—"भद्रे ! तुम्हारे परिचयकी अभिलाषासे यहाँतक आया हूँ । यदि किसी प्रकारकी आपत्तिकी आशंका न हो तो क्या अपना परिचय दे सकती हो ?"

युवती—आप तपस्वी जैसे प्रतीत होते हैं, अतएव आपको अपना परिचय देनेमें मुझको किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं है। आपसे बहुत कुछ सहायताकी आशा रखती हूँ । आप उपकारी पुरुष हैं।

वशिष्ठ—कल्याणी ! तुम किसी प्रकारका भय न करो, जो कुछ कहना हो साफ शब्दोंमें कहो । मुझसे जितनी सहायता होसकेगी, अवश्य करूँगा । परोपकारही हम साधुओंका कर्त्तव्य है ।

युवती—महर्षे ! मै संध्या नामसे इस संसारमे प्रसिद्ध हूँ ।

वशिष्ट—फिर यहाँ किस लिये कष्ट उठाने आयी हो ?

युवती—विष्णु भगवानकी तपस्याके लिये ।

वशिष्ट—फिर अकेली क्यों घूम रही हो ?

युवती—इसीलिये कि मुझे तपस्याकी विधि मालूम नहीं है, किसी अच्छे गुरुकी खोजमें थी । संयोगवश आपसे भेंट होगयी। अतएव यदि आप मुझे भगवानकी तपस्या-विधि बतानेकी कृपा करें तो मेरा बड़ा उपकार हो ।

वशिष्ट—भद्रे ! चिन्ता न करो मैं तुझे विष्णुजीकी तपस्या

की विधि मंत्रादि वताये देता हूं। तू मेरे वताये नियमोंका पालन करना। सफलता शीघ्रही पास दौड़ आयगी। भक्तोंके भगवान हैं। वे अपने सच्चे भक्तका कष्ट देख नहीं सकते।

युवती—इसीलिये उनकी तपस्या चाहती हूं।

वशिष्ठ—मैं तुमको भक्त वत्सल भगवानकी तपस्या विधि वताये देता हूं, तू एकाग्र मनसे मेरे वताये मंत्रोंको पाठ करती हुई भगवानकी चतुर्भुजी मूर्त्तिका ध्यान करना, उस समय चित्त-की एकाग्रताकी वहुत आवश्यकता है। यदि किसी कारणसे चित्त चंचल होकर ध्यान भंग हो जायगा तो सफलताकी आशाही नहीं करना। तप-कार्य वड़ा कठिन है, तपस्या सव किसीसे नहीं हो सकती। इसके लिये संयमकी वड़ी आवश्यकता है। जो धीरताके साथ विपत्ति विघ्नोंकी झंझटोंको झेलते हुए इस कार्य में दृढ़ हो जाते हैं, उन्हें सफलता अवश्य मिलती है।

युवती—महर्षे! आप मुझे जिस विधिसे रहनेको कहेंगे मैं ठीक उसीके अनुरूप रहूंगी। चित्तकी एकाग्रताके लिये आप भावना न करें, मैं इस विषयमें कोरी नहीं हूं।

वशिष्ठ—तेरी मुख-प्रभाही वता रही है कि तू वड़ी दक्षा है। ईश्वर तुझे इस विषयमें सफलता प्राप्त करावेंगे।

युवती—आप गुरुजनोंके आशीर्वादकीही आशा है। अव कृपाकर तपस्याकी विधि वतानेका कष्ट स्वीकार करें।

महर्षि वशिष्ठ संध्याके कानके निकट विष्णु मंत्र पढ़कर वोले—"जगदाधारकी चतुर्भुजी मूर्त्तिका ध्यान कर इस पावन मंत्र

को तबतक जपती रहना जबतक वे स्वयं आकर तुझे दर्शन न दें। सुन्दरी ! विश्वास रखो एकाग्र चित्तसे ध्यान-करते हुए इस-मंत्र के पाठ करनेसे भक्त वत्सल भगवान अवश्य प्रकट होते हैं। अतएव तुझे भी आकर अवश्य तुष्ट करेंगे।"

संध्या—महर्षे ! मैं आपके-बताये हुए नियमोंके अनुसार भगवानका ध्यान करूँगी। वे परम तेजस्वी महान तपवान.जगत् पिता हैं। सन्तानके नाते उनको अवश्य कृपा दिखलानीही पड़ेगी। आपने मुझपर बड़ी कृपा की अतएव हृदयसे आपका आभार मानती हूँ।

वशिष्ट—"भद्रे ! अब मैं अपने स्थानको चलता हूँ तू भी अपने अभीष्ट कार्यके साधनमें लगजा" कह आगे बढ़े संध्याने चलते समय श्रद्धा पूर्वक हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया। वशिष्टजीके जानेके बाद संध्या चन्द्रभागा नदीके किनारे निबिड काननमें प्रवेश कर तपस्याके योग्य स्थानका अनुसन्धान करने लगी। यों तो प्रकृतिने उस उपवनको तपस्याके योग्य बनायाही था फिर भी संध्या मनानीत एकान्त और भव्य स्थानकी खोजमें कुछ समय घूम आने बाद एक सघन कुंजके बीच स्वच्छ स्फोटक शिलावाले स्थानको सब प्रकार अपने योग्य तपस्थान समझ वहीं तपस्याके लिये बैठ गयी। मनोनीत स्थान प्राप्त कर संध्या महर्षि वशिष्टजीके बताये हुए नियमोंके अनुसार विष्णु भगवान-की तपस्यामें तल्लीन हुई।

मुनि श्रेष्ठ वशिष्ट संध्याके निकटसे विदा होने-बाद अपने

निर्दृष्ट स्थानको चले और मन-ही-मन उस युवतीके शील स्वभाव और सौन्दर्यकी प्रशंसा किये जाते थे। उनका अनुमान था कि संध्या स्त्री समाजमें रत्न होगी। उसकी जैसी शील स्वभाव-वाली स्त्रियांही समाज और देशको उन्नति क्षेत्रमें अग्रसर कर सकती हैं। उधर संध्या भी भगवान विष्णुकी तपस्या इसी आशासे करने बैठी कि यदि मुझको पति मिले तो महर्षि वशिष्ट जैसे स्वभाव और शीलवान। दोनोंके हृदय-भाव उन्ही दोनों-के हृदयमें छिपे थे।

मुनि श्रेष्ठ वशिष्टजीके बताये हुए मंत्रको जपती हुई संध्या एकासनपर आसीन हो एकाग्र चित्तसे भगवान विष्णुकी चतुर्भुजी मूर्त्तिका ध्यान करने लगी। उसकी तपस्या असाधारण थी। हजारों वर्षोंतक बिना अन्न-जल ग्रहण किये अपनी सब इन्द्रियों-को दमन करती हुई भगवानका ध्यान करना मामूली बात नहीं है। बड़े बडे तपस्वियोंका चित्त भी ऐसे समय स्थिर नहीं रहता।

तपारम्भ।

तपस्याके आरम्भ-कालमें संध्या सैकड़ों वर्षों तक वृक्षकी पत्तियोंसे क्षुधा शान्त करती रही, उसके बाद हजारों वर्षोंतक केवल जलकोही अपना प्राणावलम्ब बनाया, तदनन्तर सिर्फ वायु पान करके तपस्या करती रही। वैशाख जेष्ठकी प्रचण्ड गर्मीमें पञ्चाग्नि प्रज्वलित कर, वर्षामें घोर वृष्टिके साथ और शीतमें जल के बीच आसन जमाकर तपस्या किया करती थी। संध्याकी उस तपस्याको देख बड़े बड़े तपस्वी दांतके नीचे उंगुली दबाया करते थे। लगातार चारों युग तक संध्या भगवानकी तपस्या करती रही। उस कठिन तपस्यासे उसका शरीर पाला पड़े हुए कमलकी भांति बदरंग और कमलनाल सा क्षीण होगया। केवल अस्थि पंजर अवशिष्ट रह गया था। प्राण मात्र शेष था। उसकी उस अवस्थापर विष्णु भगवानको बड़ी दया आयी। युवतीकी तपस्यासे तुष्ट होकर भगवान गरुड़पर सवार हो उसके आगे आ उपस्थित हुए। अपने आगे श्री विष्णु भगवानको उपस्थित देख संध्याका हृदय हर्षसे खिल गया। भक्ति भावसे भगवानको प्रणाम कर हाथ जोड़े खड़ी रही। उसको खड़ी देख विष्णुजी बोले—"पुत्री! तू किस लिये इस जनहीन काननमें कष्ट उठा रही है? तेरी तपस्यासे मैं तुझपर तुष्ट हूं, बोल क्या चाहती है?"

पतिव्रता अरुन्धती

तेरी तपस्यासे मैं तुष्ट हूँ, बोल क्या चाहती है ?

[देखिये पृष्ठ संख्या ६

सन्ध्या हाथ जोड़े हुई बोली—"जगत्पिता! आपने इस दीनपर कृपा की, इसको दासी अपना सौभाग्य समझती है। यदि आप इस अबला पर प्रसन्न हैं तो मुंहमांगा वर देनेकी कृपा कीजिये।"

भगवान—तू अपनी इच्छाके अनुसार जो चाहे मांग सकती है। मैं तुझपर प्रसन्न हूँ, मुंहमांगा वर दूंगा।

संध्या—पिता! यदि आप सेविका पर प्रसन्न हैं तो कृपा कर यह वर प्रदान करें कि मैं संसारकी पतिव्रताओंमें सर्व श्रेष्ठ रहूँ। स्वप्नमें भी पर पुरुषकी ओर आँख न दौड़े, साथही यदि कोई पर-पुरुष बुरे भावसे मेरी ओर दृष्टि पात करे तो वह उसी समय नपुंसक होजाय।

विष्णु—कल्याणी! तू जैसा चाहती है वैसा ही होगा। संसारकी पतिव्रता नारियोंमें तू सर्व श्रेष्ठ रहेगी। स्त्रियाँ तेरा पावन नाम लेकर पतिव्रत जैसे गहन मार्गमें अग्रसर हो सकेंगी। तेरे बताये हुए नियमोंको पालनकर स्त्रियां अपना जीवन सफल करेंगी। अत्यन्त तेजस्वी पति तुझको प्राप्त होगा। लेकिन इस शरीरसे तू उनको नहीं पा सकेगी। ऋषि श्रेष्ठ मेधातीथि चन्द्र-भागा नदीके किनारे यज्ञ कर रहे हैं, उनके यज्ञमें तू अपने इस शरीरको त्याग कर, तत्कालही यज्ञ कुण्डसे तेरा दूसरा जन्म होगा। शरीर त्यागते समय तू जिसका ध्यान करेगी दूसरे जन्ममें वही तेरा पति होगा।

संध्या हाथ जोड प्रणामकर बोली—भक्त वत्सल! ऋषि-यज्ञमें

मैं किस तरह शरीर त्याग करूंगी ? सम्भव है ऋषि श्रेष्ठ मेधा-तिथि मुझे ऐसा न करने दें। उसकी युक्ति आप बता देनेकी कृपा करें।

विष्णु—पुत्री ! तू इस सूक्ष्म रूपसे वहाँ पहुंचेगी कि ऋषि तुझको देख भी नहीं सकेंगे। यज्ञमें हवन करते समय तू हव्य रूपमें आहुतिके साथ अग्नि कुण्डमें प्रवेश कर जायगी। ऐसा होने से अग्नि भी पवित्र होगी और तू भी देह धारण कर नव जात बालिकाके रूपमें अग्नि शिखाकी गोदमें पायी जायगी। ऋषि श्रेष्ठ मेधातीथिकी दृष्टि तुझ पर पड़ेगी और वे तुझे गोदमें उठा उसी समयसे पुत्रीकी भांति प्यारसे पालने लगेंगे।

संध्या—पिता ! अब मेरा प्रणाम स्वीकारिये और यज्ञ स्थान पर चलनेकी आज्ञा दीजिये।

भगवान संध्याको आशीर्वाद देकर अन्तर्हित होगये और संध्या तपासनको त्याग भगवानके बताये हुए स्थान को अग्रसर हुई।

———

संध्याका देह त्याग और अरुन्धती रूपमें जन्म

पवित्र चन्द्रभागा नदीके पुलिनपर ही महर्षि मेधातीथिकी कुटी थी। वे अपने उग्र तपके बलसे ऋषियोंमें अग्रगण्य हो रहे थे। उनकी दिव्य मूर्तिके अवलोकनसे ही उनकी विशेषताका ज्ञान होता था, मुख मण्डलसे शान्तिके साथ ब्रह्मचर्य्यका तेज टपकता प्रतीत होता था। एक बार महर्षि मेधातीथिके मनमें यज्ञ करनेको इच्छा हुई। तत्काल ही यज्ञकी उपयुक्त सामग्रियोंका आयोजन होने लगा। तपस्याके प्रभावसे बातकी बातमे उनको सब वस्तुएं प्राप्त होगयी। बड़े बड़े ऋषि महर्षियोंको यज्ञके लिये निमन्त्रण भेजे गये। यथा समय चन्द्रभागाके सुन्दर पुलिन पर महर्षि मेधातीथिने यज्ञका श्रीगणेश किया। यज्ञ करानेवाले ऋषियोंने यज्ञ कार्यमें उनका हाथ बटाया। आवश्यकतासे अधिक सब चीजें मँगायी गयीं।

यज्ञ मण्डपमें ऋषि महर्षियोंका खासा समागम होगया ? वेद मंत्रके साथ महर्षिगण यज्ञ कुण्डमें हव्यादिकी आहुति प्रदान करने लगे। जिस समय वेद मन्त्रके साथ "स्वाहा" का समागम हो गया उस यज्ञ मण्डपकी गुंजाहट द्वारा हृदय हर्षसे नाच उठता था। होम कुण्डके चारों ओर बड़े बड़े होतागण मण्डलाकार बैठे होम कर रहे थे। शेष नागकी जिह्वाकी भांति होम कुण्डसे लपलपाती हुई अग्नि शिखा दीखने लगी। यज्ञ स्थानकी शोभा बड़ी

विलक्षण ज्ञात होती थी। यज्ञ कुण्डके चारों ओर होताओंकी भव्य मूर्तियाँ कैसी अनोखी देख पड़ती थीं। उनके मुख मण्डल से कैसी असाधारण प्रतिभा निकल रही थी। यज्ञ स्थानमें आचार्य रूपसे महर्षि मेधातीथि बैठे हुए थे। उनकी वदन-ज्योति से प्रमाणित हो रहा था कि वे असाधाण तपस्वी और यशस्वी ऋषि हैं। यज्ञ स्थानकी पवित्रताके साथ विलक्षणता सम्मिश्रण देखने से ही विदित होता है। अहा! कैसा अनोखा दृश्य और चोखा भाव है। छल और धोखेका नाम भी नहीं सुना जाता। वर्तमान युगके लिये ये सब बातें असम्भव सी प्रतीत होती हैं। जहाँ यज्ञका नाम भी भुलानेकी चेष्टा होरही है वहाँके लिये ऐसा ही हो सकता है। इन दिनों यज्ञकी चर्चा चलती भी है तो स्वार्थके सहारे। यज्ञके नाम पर भी किसी न किसी प्रकार कुछ स्वार्थ सिद्धिके यत्न अवश्य हुआ करते हैं। निस्वार्थ भावसे अपना कर्त्तव्य समझ कोई उस पवित्र कार्यकी ओर आँखें नही उठाते। यद्यपि इसका फल भी हाथों हाथ पा लिया करते हैं किन्तु तौभी उनकी आँखें नहीं खुलतीं।

यथा समय महर्षि मेधातीथिके यज्ञ-स्थानमें संध्या अपने सूक्ष्म रूपमें पहुंची। यद्यपि वह यज्ञ स्थानमें सबोंको देख रही थी। किन्तु किसीने उसे नहीं देखा। यज्ञ-कार्यको देखकर वह बहुत प्रसन्न हुई। भगवान विष्णु देवके बताये हुए नियमोंके अनुसार संध्या हवनकी सामग्री होगयी और वशिष्टजीको स्वामी रूपमें ध्यान करती हुई आहुतिके साथ होम कुण्डमें प्रवेश कर

गयो। संध्याके स्पर्शसे अग्नि और भी पवित्र होगयी। संध्या-की दिव्य देह भी पहलेसे अधिक तेजस्वी होगयी। जब तक इतने कार्य्य हुए तब तक किसीकी दृष्टि होम कुण्डकी विशेषतों पर नहीं पड़ी थी। अचानक यज्ञके आचार्य्य महर्षि मेधातीथिकी दृष्टि कुण्डकी लपलपाती हुई आग पर पड़ी। उनने देखा कि यज्ञ कुण्डकी लपलपाती हुई अग्नि शिखापर अत्यन्त रूपवती नव-जात बालिका नाच रही है। महर्षि मेधातीथि उस कन्याको देख बहुत प्रसन्न हुए और शीघ्रता पूर्वक उसे अग्नि कुण्डसे बाहर निकाल लिया तथा अपने कमण्डलके पवित्र जलसे शिक्त किया। ऋषि मण्डलीकी दृष्टि भी बालिकापर पड़ी। वे सब उस स्वर्गीय रूपवान बालिकाको देख बहुत हर्षित हुए। प्रातःकालके बाल-सूर्यके समान उस नवजात बालिकाकी शरीर कान्ति थी। यथा समय यज्ञकी पूर्णाहुति हुई। मेधा-तीथिने आमंत्रित ऋषि महर्षियोंको उचित सत्कारके साथ विदा किया और बालिकाको लेकर अपनी कुटीमें वापस आ बड़े लाड प्यारसे उस बालिकाका प्रतिपालन करने लगे। उस बालिकाका नाम उन्होंने अरुन्धती रखा। अरुन्धती महर्षि मेधातीथिके आश्रममें बाल कलाधरकी भांति उत्तरोत्तर कला पूर्ण होने लगी। उसने अपनी बाल लीलासे मेधातीथिजीको विशेष आनन्द प्रदान किया। ऋषिने उसे अपनी कन्याके समान लाड़ प्यारसे पालना आरम्भ किया। उसकी तुतली बातें और ठुमकी चालें दुखियोंके हृदय-दुःखको भी दूर कर दिया करती थीं।

चिर दु:खी भी उसके भाले भाले मुखको देख थोड़ी देरके लिये अपना दुःख भूल जाया करता था। यथार्थमें उसका रूपही वैसा था। यो ता देव नदी चन्द्रभागा पवित्र थीही पर अरुन्धतीके स्पर्शसे वह विशेष फल दात्री और पवित्र होगयी। उसकी महिमा पहलेसे और अधिक बढ़ गया। प्रति दिन प्रातःकाल जब महर्षि मेधातीथि स्नान करने जाते तो अरुन्धती भी उनके साथही जाया करती थी। जिस समय महर्षि उसे सरिताके किनारे खड़ी कर आप नदीमे स्नानार्थ उतरते थे, उस समय अरुन्धतीकी सजीव स्वर्ण प्रतिमा सी मूर्त्ति देखनेसे यहा प्रतीत होता था कि आकाश-का चन्द्र अपना कलंक मज्जनकर चन्द्रभागामें स्नान कर किनारे खड़ा है। उस समय स्वर्गीय सौंदर्यकी श्रेणी समूह बालिका-को देख किसका चित्त हर्षित नहीं होता। यथार्थमें अरुन्धती अन्धेरे घरका प्रकाश थी। अपने रूप गुणकी समता नहीं रखती थी। अपनी उपमा आपही थी। उसके निवाससे मुनिका आश्रम स्वर्गसा प्रतीत होता था। मेधातीथि अरुन्धतीकी प्राप्तिसे विशेष आह्लादित रहा करते थे।

एकदिन जगतपिता ब्रह्मा उसी तरफ होकर आकाश मार्गसे अपने रथपर आगे बढ़ रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि उस बालिकापर पड़ी। उसकी मोहिनी मूर्त्तिको देख वे वहां रथसे उतर गये। ज्योंही मेधातीथिको सृष्टिकर्त्ता कमलासन ब्रह्माजीके आनेका समाचार मिला त्योंही वे बड़ी तेजीसे आश्रमसे आगे बढ़ भक्ति-भावसे उनके पूज्य चरणोंमें सिर झुकाकर बोले—"पिता ! आपके

पवित्र पदरजसे आज इस दीनकी कुटि पवित्र हुई। यदि मेरे योग्य कुछ सेवा-कार्य हो तो आज्ञा प्रदान कीजिये।"

ब्रह्मा—मैं तेरे शिष्टाचारसे प्रसन्न हूँ। तुझसे सिर्फ यही कहना है कि अरुन्धतीके लालन पालनसे तुझको कष्ट होता होगा किन्तु उसकी पर्वाह नहीं करना। अरुन्धती बड़ी होनहार है, पातिव्रतके प्रभावसे संसारकी स्त्रियोंमें इसीका आसन सबसे अधिक ऊँचा रहेगा। इसका चरित्र बड़ा निर्मल और पवित्र होगा। इसने अपनी बाल-क्रीड़ासे इस तपोवनको भी पवित्र किया है। अब तुम इसकी शिक्षाका प्रबन्ध करो। कुछ दिनोंतक किसी योग्य अध्यापिकाके अधीनमें रखकर शिक्षा प्राप्त करनेसे सोनेमें सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ कर दिखायगी। यद्यपि आज इसकी अवस्था सिर्फ पांचही वर्ष की है, फिर भी यही अवस्था शिक्षाके अनुकूल है। इस अवस्थामें बालक बालिकाओंका हृदय बड़ा कोमल रहता है। अतएव इस उम्रमें जो कुछ सिखाया जायगा वह उसके हृदयपर सदाके लिये अंकित होजायगा

मेधातीथि—पिता! आज्ञा पालन करनेको तैयार हूँ। कृपाकर यह बतानेका कष्ट उठावें कि अरुन्धतीको किस सती श्रेष्ठा पतिव्रताकी सेवामें अर्पण करूं?

ब्रह्मा—इन दिनों पतिव्रताओंमें सर्व श्रेष्ठ श्रीमती सावित्री और सती बेहुलाजी हैं। अतएव इन्हीं दोनोंकी सेवामें आप अपनी कन्या अरुन्धतीको शिक्षा ग्रहणके लिये भेजिये। आशा और विश्वास है, कि उनकी छायामें रहकर आपकी कन्या

उपयुक्त शिक्षा लाभ कर पायगी। इतना कहने बाद अरुन्धती को ब्रह्माजी अपनी गोदमें उठाकर बोले—"बेटी! तनमनसे शिक्षा सोपानपर पैर बढ़ाना। ऐसा करनेसे सतियोंमें श्रेष्ठ और पतिव्रताओंमें प्रथम गिनी जाओगी।"

अरुन्धतीने ब्रह्माजीको प्रणाम किया। तदनन्तर प्रजापति अन्तरध्यान होगये।

जगतपिता ब्रह्माके मुखसे पुत्रीकी शिक्षाकी बातें सुन और उनके बिदा होने बाद महर्षि मेधातीथि अपनी कुटीमें आये और अरुन्धतीको गोदमें ले प्यारसे उसका मुख चूमते हुए बोले—"पुत्री! कुछ दिनोंके लिये तुझको इस कुटीसे बाहर रहना पड़ेगा क्योंकि यह अवस्था शिक्षा ग्रहण करनेकी है।"

कुटी छोड़नेका नाम सुनकर अरुन्धती मचल कर बोल उठी। पिताजी! आपको छोड़कर मैं अकेली अन्यत्र न रह सकूंगी। आपही अपने पास रखकर मुझे शिक्षा दिया करें।

मेधातीथि—मुझसे तेरी उचित शिक्षाका प्रबन्ध न हो सकेगा। अन्यत्र रहनेपर मैं तुझे देख आया करूंगा।

अरुन्धतीकी शिक्षाका समय ।

महर्षि मेधातीथि अपनी पंचवर्षीया कन्या अरुन्धतीको गोद में लिये देवलोकको चले। देवी सावित्री और देवी वेहुला प्रति दिन कुछ समयतक एकान्तमें बैठ पातिव्रतके विषयमें चर्चा किया करती थीं। अनेक देव ललनायें भी उनके निकट शिक्षा ग्रहण-की अभिलाषा किये नित्य वहां आया करती थीं। महर्षि मेधा-तीथि अपनी कन्याको गोद लिये उन दोनों महासतियोंका अन्वे-षण करते उसी स्थानपर आ पहुँचे जहाँ सावित्री और वेहुला पातिव्रतके विषयमें चर्चा कर रही थीं। मेधातीथिने भक्ति-भाव से उनके चरणोंमें सिर झुकाया और अपनी पुत्री अरुन्धतीसे भी प्रणाम कराया। सावित्री और वेहुलाने मुनिको आशीर्वाद देकर कहा—मुने! आपने किस लिये यहाँतक आनेका कष्ट उठाया है?

मेधातीथि—जगत पिता प्रजापतिकी आज्ञासे मैं आप लोगों-की पवित्र सेवामें उपस्थित होने आया हूँ।

सावित्री—क्यों? किस लिये?

मेधातीथि—इसीलिये कि आपलोग मेरी इस कन्याको पाति व्रत्यकी शिक्षा प्रदान करें। प्रजापतिकी आज्ञा है कि आप लोगों-से इसको पातिव्रत्यकी शिक्षा दिलायी जाय। साथ-ही मेरा भी अनु-रोध है कि आप इसे अपनी पुत्री समझ प्रेम पूर्वक पातिव्रत्यकी

शिक्षा प्रदान करें। आशा और विश्वास है कि आपकी संगतिसे उस गम्भीर विषयका ज्ञान इसको प्राप्त हो जायगा।

सावित्री—मुने! आपकी कन्या स्वयं सर्वगुण सम्पन्ना होगी, आप इसको साधारण कन्या न समझें, समय पाकर यह पतिव्रता-ओंमें पूजनीय होगी। यदि आपका अनुरोध और जगत्-पिताकी आज्ञा हैं तो कुछ समयके लिये इसे हम सबोंके साथ छोड़ जाइये। हम सब इसको अपनी देख रेखमें रख शिक्षा देती रहेंगी। मेरा अनुमान और विश्वास है कि अरुन्धती संसार-की पतिव्रता स्त्रियोंकी पथ-प्रदर्शिका होगी। इसके बताये हुए मार्गपर चलनेवाली स्त्रियां अपना नारी जन्म सार्थक कर सकेंगी।

मेधातीथि—"इसी अभिलाषा से मैं आप लोगोंकी पवित्र सेवामें इसको पहुंचाने आया हूँ।" कहकर अरुन्धतीको सावित्री के हाथ सौंप घरको वापस लौटे। उनको लौटते देख अरुन्धती बोली—पिताजी! आप मुझे छोड़कर कहाँ जा रहे हैं? आपको बिना यहाँ कैसे रहूँगी'। मेधातीथिने अरुन्धतीको अनेक प्रकार संबोध प्रबोध देकर सावित्री तथा बेहुला देवीके हाथ सौप वहाँसे चल पड़े।

महर्षि मेधातीथिके वापस आनेपर अरुन्धती सावित्री और बेहुलाके साथ रहने लगी, वे दोनों उसे अपनी पुत्रीके समान प्यारकी दृष्टिसे देखा करती थीं। शिक्षा दीक्षाका भी श्रीगणेश कर दिया गया। अरुन्धती अपने अपूर्व पूर्व संस्कारके बल, अलौकिक प्रतिभावान थी। जिस गहन मार्गमें साधारण स्त्रियों

का प्रवेश होना महा असम्भव है उसे वह बड़ी आसानीसे अपने अनुकूल बना लेती थी। सावित्री और बेहुला उसके शील स्वभाव पर बहुत प्रसन्न रहा करती थीं। बेहुलाने अरुन्धतीसे कहा "पुत्री! स्त्रियोंके नारी जन्म सार्थक करनेके लिये बस एकही अमोघ पथ है। जो स्त्रियाँ अपने पूज्य पतिके पवित्र पद-पद्ममें अपने चित्तको सदा लगाये रहेंगी, स्वप्नमें भी पर पुरुषकी ओर आंख न उठावेंगी सेवाकोही अपना जीवन धर्म समझेंगी उनके लिये स्वर्ग हाथमें ही समझो। पतिव्रताका यही धर्म है कि—

एकै धर्म एक व्रत नेमा।
काय वचन मन पति पद प्रेमा॥

संसार सागरसे पार होने के लिये आर्य महिलाओं की यही सुन्दर नाव है। इसके सहारे वह दुर्गम भवसागरसे अनायास पार हो सकती है। पतिव्रताओंका बल दीन-दुःख-भंजन भक्त वत्सल भगवान हैं। विश्वास रखो पतिव्रता स्त्रियां अपने पुनीत पतिव्रत बलसे ब्रह्माको भी उलट सकती हैं। पातिव्रत-बल सब बलोंसे अधिक है। इसके आगे किसीकी कुछ नहीं चल सकती

अरुन्धती बेहुलाजीके इस अमूल्य उपदेशको हृदयङ्गम करती जारही थी। वह अपनी माताके तुल्य सावित्री और बेहुलाको पूज्य दृष्टिसे देखा करती थी। नित्य कुछ समय तक उपदेश सुननेके बाद अरुन्धती उनके प्रत्यक्ष और परोक्षमें भी उत्कृष्ट २ धर्म ग्रन्थोंका अनुशीलन और मनन करने लगी। अपनी असा-

धारण प्रतिभासे अल्प समय में ही वह वेद-वेदान्तोंके मार्गोको समझनेवाली योग्य विदुषी होगयी। अपनी छात्राकी परिमार्जित बुद्धि और अलौकिक चमत्कारपर सावित्री अभिमान करने लगी। इसी प्रकार शिक्षा सोपानपर पैर बढ़ाते बढ़ाते अरुन्धतीने बाल्या-वस्थाकी सीमाको अतिक्रम कर किशोरावस्थामें प्रवेश किया किशोरावस्थामें कदम रखतेही उसकी रूपकली खिल गयी। उसका दिव्य मुख-मण्डल निष्कलङ्क पूर्ण चन्द्रसा चमकने लगा। उसकी कमल जैसी बड़ी बड़ी सुन्दर आँखें मृगाकी आंखोंसे बाजी मार रही थीं। काले काले रेशमसे कोमल केश लटें काली काली नागिन सी लटकती हुई प्रतीत होती थीं। सिंहनीसी पतली कमर चलनेके समय बल खा जाया करती थी। खिले हुए अरुण कमल जैसे कर पल्लव अत्यन्त अनोखे दिखायी पड़ते थे। वह अपनी स्वाभाविक सुरीली बोलीसे कल कण्ठा कोकिलाको भी लज्जित किये देती थी। दो तीन समवयस्का देव-कन्या भी सखी रूपमें अरुन्धतीके साथ लगी रहती थीं। उन सबोंको उसके साथ निश्छल प्रेम होगया था। जिस समय अरुन्धतीको शिक्षा से अवकाश मिलता उस समय वह अपनी उन सखियोंके साथ मिलकर धर्मचर्चा और नारी कर्त्तव्यकी बातोंपर तर्क वितर्क किया करती थी। वायु सेवन तथा मन बहलानेको उन सखियोंके साथ तपोवनकी ओरभी जाया आया करती थी। उनकी वे सखियाँ प्रायः नव विवाहिता थीं। अवस्थामें छोटी होने परभी वे सब अरु-न्धती को अपना ज्ञान गुरु समझा करती थीं। यह भी उन सबोंके

साथ बातें करनेमें प्रसन्न रहा करती थी। वे सब क्रमशः अपनी अपनी सुना जाया करती थी, तदनन्तर यह उनकी बातोंका उत्तर देना आरम्भ किया करती थीं। अरुन्धतीकी स्मरण शक्तिको देख देव कन्याओं को बड़ा आश्चर्य हुआ करता था। वे सब समझती थी कि अविवाहिता अरुन्धतीमें इतना अनुभव होना अनुमानके बाहरकी बात है। एक दिन उपवनमें कुछ आगे बढ़नेपर वेदवती नामक एक युवतीने अरुन्धतीसे कहा—"बहिन! तेरी संगतिसे मुझको बड़ा लाभ हुआ। पहलेकी अपेक्षा मेरे मनके भावमें आशासे अधिक परिवर्तन हुआ, किन्तु अब भी मुझमें कई ऐसे दुर्गुण भरे हुए हैं कि शीघ्र दबते ही नहीं। स्वामी-सेवाको प्रधान कर्त्तव्य समझ कर भी घरेलू झंझटोंके आगे कुछ नहीं करना पड़ता। ननद जेठानियोंकी ज़हरीली चुटकी शर्वाङ्ग शरीरमें जलन पैदा किये देती है। उनकी तानें भरी तीक्ष्ण बातें तेज़ बाणके समान हृदयको वेधे डालती हैं। स्वार्थकी मात्रा इतनी अधिक है कि किसीकी भलाई सूझती ही नहीं। सास ससुरकी बातें भी असह्य सी प्रतीत होतीं हैं। इन सब दुर्गुणों को दबानेकी युक्ति बताओ।

वेदवतीकी इन बातोंको सुनकर अरुन्धती बोल उठी—सखी हृदयके विकारोंको दूर करनेके लिये इन्द्रिय-संयमसे बढ़कर कोई दूसरी युक्ति नहीं दिखाती हैं। यदि सच्चे हृदयसे पातिव्रत धर्म का व्रती हो जाओ तो सब ठीक ही है। इस संसारमें पातिव्रत धर्मके अतिरिक्त किसीमें कुछ सार नहीं है। लोभ मोह और

माया उस पवित्र मार्गके बाधक हैं। अज्ञात गतिमें गिरी रहनेसे यह दिव्य मार्ग दिखायी ही नहीं पड़ता। अपनी ननद जेठानी और सासके साथ पवित्र श्रद्धा भक्तिका व्यवहार किया जाय तो निश्चय उसका फल भी स्नेह संपुट हुआ करेगा। वे भी उसके साथ प्रेम करेंगी। विश्वास रहे जो कार्य प्रेमके बल अनायास सिद्ध होते हैं वे और किसी प्रकार उस तरह सिद्ध हो ही नहीं सकते। जो व्यक्ति रोब दाब और कड़ाईसे कार्य सिद्ध करना चाहते हैं। भय दिखाकर कार्य लेना चाहते हैं वे कभी कृत-कार्य नहीं होते। यदि किसी प्रकार कार्य सिद्ध भी हो गया तो उसमें प्रेम ही नहीं रहता। इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेसे तुझको पता लग जायगा।

वेदवती—बहिन! तुम्हारे उपदेशके अनुसार कार्य करनेको तैयार हूँ। किन्तु फिर भी ननद जेठानियोंके आचरणसे कुछ भी धैर्य नहीं धर सकती हूँ। उनकी जली कटी बातें सुनकर क्रोध हो आया करता है। पद पदमें वे सब अकारण कष्ट पहुंचाया करती हैं। यदि उनसे बचनेकी कोई युक्ति हो तो कृपाकर शीघ्र बताओ। यद्यपि मैं पहली बार ससुराल गयी; किन्तु इसी पहली यात्रामें उन सबोंने मेरा चित्त पानी सा ठण्डाकर दिया। मेरी जेठानीजी झूठी मूठी बातोंसे अपने पूज्य पतिजीका कान भरती रहती हैं और वे भी ऐसे महात्मा हैं कि स्त्री वाक्यको वेद-वाक्य समझ बैठते हैं। सम्भव है बहुत शीघ्र इस प्रकार भाई भाईमें विवाद हो जायगा। यों तो ब्राह्मणों पर लक्ष्मीजी दया करतीं ही नहीं फिर आपसके

इस फूटसे उनकी कैसी अवस्था होगी यह अनुमानगम्य है।

अरुन्धती—बहिन घबड़ाओ नहीं सब कार्य धीरे धीरे सिद्ध हो जांयगे। अभी इसके लिये कुछ समय चाहती हूँ। मुझको कई बातोंका पता लगाना है। पीछे इसकी युक्ति बताऊंगी।

वेदवती—क्या यह बताओगी कि ब्राह्मणों पर लक्ष्मीकी कृपा क्यों नहीं होती, दरिद्रता उनका पिण्ड क्यों नहीं छोड़ती?

अरुन्धती—लक्ष्मी जी पतिव्रताओंमें प्रधान हैं इसीलिये ऐसा करती हैं।

वेदवती—पतिव्रताका हृदय कोमल हुआ करता है कठोर नहीं।

अरुन्धती—पतिव्रता पतिका अपमान देख नहीं सकती चाहे उसका हृदय कितना ही कोमल क्यों न हो।

वेदवती—ऐसा तो होना ही चाहिये।

अरुन्धती—इसीलिये लक्ष्मी जी ब्राह्मणोंसे असन्तुष्ट रहा करती हैं। पतिका अपमान करने वाला समझ उनसे बहुत दूर रहा करती हैं।

वेदवती—ब्राह्मणोंने उनके पतिका अपमान कैसे किया?

अरुन्ध—तुझे ज्ञात नहीं कि भृगुजीने भगवानके हृदयमें लात लगायी थी। भगवानने तो ब्राह्मण देवताके चरण-प्रहारको प्रसन्नता पूर्वक सह लिया किन्तु लक्ष्मी जीसे पतिका वह अपमान सह्य नहीं हुआ। सुनती हूं,उसी दिनसे ब्राह्मणोंसे वह असन्तुष्ट रहा करती हैं।

वेदवती—हो सकता है, ये पतिव्रताओंके अनुकूल कार्य है, फिर भी लक्ष्मीने दयाकी जो ब्राह्मणको उनके कार्यका दण्ड नहीं दिया।

अरुन्धती—वेदवती! अभी तुझे यही कहना है कि तू अपनी ननद-अथवा जेठानीके वचन बाणोंको धीरताके साथ सहन किया कर। अवसर आयगा कि सच्ची बातें निकल आयंगी। द्वेषसे द्वेषका शमन नहीं होता है। अग्निके अङ्गारोंसे लप लपाती हुई अग्नि शिखा ठंढी नहीं हो सकती। उसके लिये शीतल जलकी ही आवश्यकता होती है। अतएव तेरी सहन-शीलता ही तुझे सफलता प्राप्त करायगी।

वेदवती—यों तो जेठजी अच्छे विद्वान और प्रशंसनीय वुद्धिमान पुरुष हैं; किन्तु उस समय उनकी उज्वल वुद्धि न मालूम क्यों धुंधली हो जाया करती हैं। इस ओर विचार करनेपर मुझे अपने अभाग्य पर आँसू बहाने पढ़ता है।

अरुन्धती—यही तेरी भूल है। संसार कार्य क्षेत्र है इसमें कार्य करने वालेको अवश्य उसके अनुसार फल प्राप्त हुआ करते हैं। हां! शोक दुःखादि की कसौटीमें कसते समय अधीर होनेसे खरा उतरना महा असम्भव है। अभी एस विषयमें सिर्फ इतना ही कहना है। विशेष बातें फिर कहूंगी।

अरुन्धतीका तपोवन भ्रमण

भगवती सावित्री और वेहुलाके निकट शिक्षा ग्रहण करते अरुन्धतीको दश वर्ष वीत गये। इस तरह उसकी अवस्था पन्द्रह वर्षकी पूरी होगयी। सोलहवां वर्ष आरम्भ हुआ। उसकी बाल-चञ्चलता पर लज्जाने छापा मारा। रूप समुद्र लहराने लगा बाहरी सौन्दर्यके साथही साथ भीतरी सौन्दर्य भी बढ चला। जिसने अरुन्धती के सुधा सम्पुट वचनोंको सुना उसको पता लग गया होगा कि अरुन्धतीका बाहरी सौन्दर्य उसकी भीतरी पवित्रताकी आभा मात्र है। किशोरावस्थामें पदार्पण करते ही सुभगा अरुन्धती व्रत पूजनादिमें विशेष लीन रहने लगी। उसके इस परिवर्तन की ओर सावित्री का ध्यान आकर्षित हो चुका था। वे उसके विवाह की चिन्तामें लगी। महर्षि मेधातीथिको इसकी सूचना देना चाहती थीं।

कभी कभी कुछ चुनी हुई सहेलियोंके साथ अरुन्धती प्रायः तपोवनकी शोभा देखने जाया करती थी। तपोवन की शोभा वह अपनी सखियोंसे कहा करती—"अहा! तपोवन कैसा सुन्दर है। इस तपोभूमिमें दुःख क्लेश विषाद इत्यादि की छाया भी नहीं दिखाती। चारों ओर शान्त साम्राज्य सा प्रतीत होता है।"

एक दिन वह अपनी सहेलियोंके साथ तपोवनकी शोभा देखती एक पत्थरकी चट्टान पर गयी। कुछ देरतक प्रकृति क-

विलक्षण शोभा देखती रहनेके बाद एक सखी बोली--"सखी अरुन्धती माधवीलताकी शोभा किसी सुन्दर सुडौल वृक्षका आश्रय लेने ही से अधिक बढ़ती है।"

अरुन्धती मुसकराती हुई बोली—"खेद है कि तूने तर्क शास्त्र का अध्ययन नहीं किया।"

सखी—तर्क शास्त्रका पढ़कर वितर्ककी वितण्डासे बड़ी गड़बड़ी उठती है।

अरुन्धती—गीता! मैंने तेरे प्रेमका मतलब नहीं समझा। साफ शब्दोंमें समझाकर कहो।

गीता-मैंने ऐसी टेढ़ी सीधी बातें नहीं कहीं। जो कुछ है तेरे आगे है साफ साफ समझले। "माधवीलता सुडौल वृक्षके आश्रयमें शोभा पाती है" इसमें कौनसी समझमें नहीं आती?

अरुन्धती—इसका मतलब साफ शब्दोंमें कह; क्या कहना चाहती है?

गीता—यही कि तू किसी पुरुष पुङ्गव का आश्रय ग्रहण कर अब वाल्यावस्थाकी सीमापार कर किशोरावस्थामें पहुंची। क्या इसी समयसे योगिनी होना चाहती हो?

अरुन्धती हँसती हुई बोली—गीता! मेरे लिये बड़ी चिन्ता करने चली अपना स्मरण है या नहीं?

गीता—सच्ची सखी वही कही जासकती हैं जो अपनी सखी के दुःखसे दुःखी हो। अब मुझसे तुम्हारी यह असह्य यातना देखी नहीं जाती।

अरुन्धती—विश्वास रखो मुझको किसी बातका दुःख नहीं है। मैं इसी अवस्थामें सुखी हूं। (वनकी ओर दिखाकर) अहा! तपोवन की यह अनोखी छटा कैसी सुहावनी मालूम होती है। इस पवित्र भूमिमें दुःख कैसा? भौंरोंके झुण्डके मनोहर नाच वन विहङ्गों की मीठी तानसे वनस्थली की गुञ्जाहट हृदय को कैसा आनन्द प्रदान कर रही हैं। देखो गीता! हरे हरे पत्तोंमें कोमल कुसमोंका छिपना किसके चित्तको सुख नहीं पहुंचाता है। इन वन पुष्पोंकी लावण्य-छटाको देखकर किसको दुःख होता होगा?

गीता—और किसको? तुम्हारी जैसी योगिनीको! मेरी आंखोंमें धूल देनेकी चेष्टा न करो मैं सब समझती हूं। खैर थोड़ी देरके लिये यह भी मानने को तैयार हूं। लेकिन ऐसी अवस्था में भी हम सबोंकी बातें भी माननी पड़ेगी। अभी घण्टों तक वेदवतीको क्यों उपदेश दे रही थी। यदि इसी अवस्थामें ही तुम अपनेको सखी समझती हो तो क्या वेदवतीको जेठानी वेद-वतीके सतानेमें अपनेको सुखी नहीं समझती होगी। यदि हां तो तुमने उसे क्यों बुरा समझा? क्यों नीतिका उपदेश देना उचित समझा? यदि तुम्हारी दृष्टिमें वह दोष है तो मेरी दृष्टि में भी तुम्हारा योग-साधन यहाँ दोष है।

अरुन्धती—अच्छी उपदेशिका मिली। सन्तोष रखो समय पर सब काम हुआ करते हैं। ईश्वर चाहेगा तो तेरी अभिलाषा भी अवश्य कभी न कभी पूरी हो जायगी।

अच्छा स्मरण दिलाया! वेदवतीके लिये अवश्य चिन्ता हो रही है। क्या तुझे उसके विषयमें कुछ मालूम है?

गीता—वेदवती की जेठानी मेरी सङ्गिनी हैं। उसका स्वभाव उतना बुरा नहीं हैं लेकिन शिक्षासे दूर रहनेके कारण हठीलापन और नासमझी अवश्य किया करती है। मेरे अनुमानसे इसी नासमझीके कारण वह वेदवतीसे विवाद किया करती है। जो उसके स्वभावको भली भांति पहचान सकेगा उसको उससे विवादकी आशङ्का नहीं रहेगी। पतिके साथ भी उसका व्यवहार अच्छा नहीं होता। खरी खोटी कहना उसका स्वाभाविक है। उसके पूज्य पति देव शुद्ध सात्विक ब्राह्मण हैं। अत्यन्त शुद्ध होना भी दोष हैं। मनोरमा अपने पतिको जो कुछ कह दिया करती है वे उसी पर विश्वास कर बैठते हैं। वेदवतीके स्वामी की जितनी प्रशंसा की जाय सब थोड़ी है। भोजनादिका प्रबन्ध अतिथि-सेवा पिता माताकी आज्ञाका पालन करना वे अपना कर्तव्य समझा करते हैं। भाई और भाभीके साथ भी उनका वैसाही उच्च विचार और श्रद्धा भाव है। वेदवती सास ससुरकी सेवामें कभी पीछे पैर नहीं रखती। जेठ जेठानीकी आज्ञापालन में भी कुछ विलम्ब नहीं करती फिर भी मनोरमा उससे प्रसन्न नहीं रहती।

अरुन्धती—यदि ऐसाही है तो भी तुम ठीक राह पर लाने का यत्न नहीं करती। इसके पहले तुमने इस विषयमें मुझसे कभी कुछ नहीं कहा था। छेड़ने पर अभी कुछ लम्बी कथा

सुनागयी । खैर यह बता सकती है कि मनोरमा यहाँसे कितनी दूर रहा करती है।

गीता—चन्द्रभागा नदीके किनारे ही रहा करती है। यहां से दूर नहीं है।

अरुन्धती—यहाँसे दूर नहीं हो सकती है क्योंकि हम सब अपने स्थानसे बहुत दूर निकल आयी हैं। चन्द्रभागा जैसी पवित्र नदीके पुलिन पर रहने वाली स्त्रियोंका ऐसा स्वभाव? उस पवित्र नदीके किनारे रहनेवाले जीव तो ऐसे अनुदार नहीं होते।

गीता—मैंने कुछ भूलकी चन्द्रभागा नहीं, चन्द्रा नदी जो यहाँसे बहुत निकट हैं उसीके किनारे रहा करती है। मेरा अनुमान है कि यहाँसे बहुत निकट है।

अरुन्धती—क्या उससे भेंट हो सकती है? यदि हाँ तो कहाँ और कैसे?

गीता—जब इच्छा करो तभी भेंट होसकती है। वह मेरी प्यारी सखी है। कहनेके बाहर नहीं होगी।

अरुन्धती—उस समय हम दोनोंके साथ वेदवतीका रहना भी आवश्यक हैं। उसी पवित्र पर्वत पर हम तीनोंके साथ उसको मिलाओ। मैंने कुछ समयके लिये माता सावित्री और बेहुला जीसे मनसा पर्वतपर रहनेकी आज्ञा माँगली है अतएव कुछ समय तक पर्वत पर यहांकी अलौकिक शोभा देखती रहूँगी।

मनोरमाकी माया।

मनोरमा अपनी कुटीमें अपने पूज्य पतिके आगे बैठी हुई उन पर वाक्य-वाण बरसा रही है और उसके पूज्य पति हृषिकेशजी सिर नीचे किये सब सह रहे हैं। उनके बहुत समयतक मौन रहनेपर मनोरमा बिगड़कर बोली—आपके आगे घण्टोंसे मैं अपना रोना रो रही हूँ किन्तु आपका हृदय नहीं पसीजता। आप के अनुज दिन दहाड़े अत्याचार करें और आपके मुखसे बात भी नहीं निकले। यदि ऐसाही स्वभाव था तो भलेही भाईके लालन पालनमें रहकर बदलेमें लात गाली सहते रहते। मुझसे ऐसा अन्याय नहीं देखा सुना जायगा। वे घरका कुछ कार्य करते हैं अवश्य, लेकिन उसका मतलब यह नहीं कि उसके बदले में उनकी तीखी दृष्टिपर चढ़ी रहूँ। आपके भाई हैं आप भलेही सब कुछ सहिये किन्तु मैं क्यों सहने चलूं ?

हृषिकेशजी बोले—प्यारी! संसारमें भाईके समान प्रिय दूसरी वस्तु नहीं है। मैं तुम्हारी बातोंपर कैसे विश्वास करूँ। मेरा अनुज मेरे प्रति किसी प्रकारका बुरा भाव ध्यानमें लावे यह कभी सम्भव नहीं। मैंने उसे श्रद्धा भक्तिके साथ अपनी और तुम्हारी सेवा करते पाया है। मैं तुम्हारे कहनेमें पड़कर ऐसे भाईको कभी नहीं त्याग सकता। मुझको विश्वास है कि मानभंजन जैसा अनुज किसीको सौभाग्यसेही मिलता होगा। तब यदि तुम्हारी

इच्छा उसके साथ रहनेकी नही है तो अलग होकर रहो किन्तु मैं अपने अनुजके साथ रहूँगा।

पतिके मुखसे इतनी बातें सुनतेही मनोरमाका मुख क्रोधसे तमतमा गया। वह भूखी सिंहनी सी कड़क कर बोली—आप अपने भाईके लिये जीते मरते रहें। मैं अपने पिताके घर जाती हूँ। अब इस घरमें मेरा रहना कदापि नहीं होगा।

इसके बाद वह अपनी गठरी संभाल आगे निकलनाही चाहती थी कि हृषिकेशजी भयभीत हो उसके आगे गिर कर बोले,— प्यारी मनोरमा! क्षमा करो मुझसे भूल हुई। मैं तुम्हारा अपमान नहीं करना चाहता। जैसी आज्ञा दो वैसाही करनेको तैयार हूँ। यदि मानभंजनसे अलग रहनेमेंही कुशल समझती हो तो आजही उससे अलग होजाता हूं। किन्तु ऐसा करनेके पहले पुनः इसपर एकबार विचार लेना अच्छा होगा, मानभंजन या उसकी धर्मपत्नीमें जो दोष हो उसको दूर करनेकी चेष्टा करनी चाहिये लेकिन उसके विना वेतन पानेवाले दासी दासको अलग करना ठीक नहीं होगा। इससे अपनी हानि अधिक है, लोकापवादकी ओर भी विचार करो और अपने कष्टका भी अनुमान करो। यदि इन सब बातोंके विचारनेपर भी मान भंजनको अलग करनेकाही निर्णय होगा तो अभी उसको अलग कर दूँगा।

स्वामीके मुखसे भाईके अलग कर देनेकी बात सुनकर मनोरमाका क्रोध कुछ कम हुआ वह तीक्ष्ण स्वरसे बोली—मानभंजनको अलग करनेपरही मैं इस घरमें रह सकूँगी।

हृषिकेश—अलग होनेसे भोजनका प्रबन्ध कैसे होगा ? पिता माताकी सेवा कौन करेगा ? मुझको अध्यापकीसे अवकाशही नहीं मिलता है ।

मनोरमा—घबड़ाओ नही अध्यापकजी ! यदि तुम्हारी बुद्धि बालकके पढ़ानेहीमें निपट जाती है तो और कार्य मेरी बुद्धिसे किया करो । अभी मै तुम्हें सब बताये देती हूं ।

हृषीकेश—अबसे तुम्हारे कहनेके अनुसार ही चला करूँगा । कहो क्या करनेको कहती हो ?

मनोरमा—मैं भी भली प्रकार समझती हूँ कि मानभंजन हम सबोंकी सेवाको अपना कर्त्तव्य समझता है । कभी भूलकर भी इन कार्यों से उसे दुःख नही होता है । आप उसे जेसी आज्ञा देंगे उसके पालनेमें वह कभी विलम्ब नहीं होने देगा ।

हृषिकेश—इसीलिये मैं कह रहा था कि उसको जेसा भाई किसीको सौभाग्यसे मिलता होगा । अब तुमको विचारना चाहिये कि उसको अलग करने से हम सबोंको लाभ है या हानि ? आचार्यके समान भक्तिसे देखता है और सेवकसे बढ़कर हृदयसे सेवा करता है । अतएव उसके अलग होनेसे कष्ट की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जायगी ।

मनोरमा—वह लड़का तो सपूत है, उससे हम सबोंको बहुत आराम मिलता है किन्तु जिस दिनसे उसकी धर्म पत्नी आयी उस दिनसे उसमे परिवर्तन होने लगा है। सम्भव है पीछे पश्चात्ताप करने के अतिरिक्त और कुछ हाथ ही न लगे । इसीलिये अभीसे यत्न

करनेके लिये कहती हूँ। उसकी धर्मपत्नी वेदवती उसको देवतासे अधिक आदरसे देखती है। अपनी सच्ची सेवासे स्वामीको सन्तुष्ट किये रहती है। सम्भव है ऐसी सेवासे वह पत्नीके कब्जेमें आकर हम सबोंका निरादर करना आरम्भ करदे। यदि सेवककी भी उचितसे अधिक सेवा होने लगे तो सम्भव है वह अपने सेव्यकी सेवामें त्रुटि दिखाने लगे। वेदवतीके आनेके पहले मानभंजनका जैसा स्वभाव था अब वैसा नहीं है। कुछ कुछ परिवर्तन होने लगा। अब अवकाशके समय वेदवती उसके पैर दबाती है, स्नान कराती और धोती फींचती है। इस प्रकार स्त्रीसे सम्मानित रहनेसे उसके स्वभावमें परिवर्तन होना स्वभाविकही कहा जा सकता है। इसीलिये मेरा विचार है कि ऐसी कोई युक्ति निकाली जाय कि वेदवती उससे अलग होजाय। बस, सब ठीक होजायगा फिर हम सबोंके सुखके मार्गमें कांटे नहीं बिछेंगे। घरका भोजन भी मैं बना लिया करूँगी और सब कार्य मानभंजन कर लिया करेगा।

हृषिकेश—प्यारी! स्वार्थकी पट्टी आंखसे हटाकर देखो। वेदवती सच्ची पतिव्रता है। उसको किसी प्रकारका कष्ट पहुंचानेसे मंगलकी आशा मत करो। यदि सच्चे हृदयसे वह स्वामीकी सेवा करती है तो तेरा क्या बिगड़ता है? उसको पतिसे अलग कर तुम सुखकी आशा न करो। अभीतक तुम्हें पातिव्रतका प्रभाव मालूम नहीं हुआ है। मेरी बातोंकी ओर भी ध्यान दो अपनेही हठपर अड़ी मत रहो। विचार कर कार्य करना चाहिये।

मनोरमा—आप फिर मेरी बातोंका प्रतिवाद करते है । ऐसा करनेसे मैं इस घरमें कदापि नहीं रह सकती। मैंने पहले ही आपको साफ शब्दोंमें कह दिया है। पढ़ लिखकर भी आप मूर्ख जैसी बातें करते हैं। स्मरण रहे मेरी बुद्धिके अनुसार कार्य करनेसेही आपका मंगल है।

हृषिकेशजी लम्बी सांस छोड़ते हुए बोले—जो कुछ कहना चाहती हो। कह लो, मैं समझ गया कि सब प्रकारसे मेरा दुर्दिन ही ऐसा कराने चला है। विवश होकर तेरीही बुद्धिके अनुसार चलूँगा यद्यपि मेरी आत्मा ऐसा करनेसे असन्तुष्ट है।

मनोरमा—देवताजी! आप अपनी आत्माको असन्तुष्ट क्यों कर रहे हैं जिससे आपकी आत्मा सन्तुष्ट रहे वही कार्य कीजिये।

हृषिकेश—यदि तुम इस घरको छोड़ नहीं भागो तो मैं वैसा ही करूँ जैसी मेरी इच्छा है।

मनोरमा—उस अवस्थामें अपमान सहनेके लिये मैं आपके घरमें नहीं रह सकती।

हृषीकेश—तब तेरी मर्जीके खिलाफ कोई कार्य कैसे हो सकता है। क्या करने कहती हो?

मनोरमा—जितना शीघ्र होसके वेदवतीको इस घरसे अलग करदो अन्यथा मैं इस घरमें एक क्षणके लिये भी नही रह सकती।

हृषीकेश—कोई युक्ति नहीं सूझती है कैसे क्या करूँ।

मनोरमा—अजी लजाते या डरते क्या हो? अभी मानभंजन को बुलाकर कह दो कि "कल वेद्वतीको पिताके घर भेज दें। अभी उसकी अवस्था कम है। यहाँ उसको बड़ी तकलीफ़ होती है, दूसरेकी लड़की है तो क्या? उसके सुख दुःखका अनुमान भी तो करना चाहिये।" इतनेसे ही काम हो जायगा। सांप भी मर जायगा और लांठी भी नहीं टूटेगी।

अध्यापक हृषीकेशजीने इच्छा नहीं रहनेपर भी मानभंजनको बुलाकर सब बातें कह दीं। भाईकी आज्ञा पाकर मानभंजनने अपनी धर्मपत्नी वेद्वतीको सब बातें कहीं जिन्हें सुनकर वेद्वती बोली—"नाथ! आप मुझको अपनी सेवासे वंचित न करें। विचार कर देखें पति सेवाके अतिरिक्त स्त्रीका और कार्यही क्या है। मैं आपके बिना स्वर्गमें भी सुखी नहीं रह सकती। पिताके घरमें मुझे सच्चा सुख नहीं मिल सकता। अतएव दासीको सेवासे वंचित नहीं कीजिये। मैं वहाँ सुखी नहीं रहूँगी।

मानभंजन—प्यारी, मेरी इच्छा भी नहीं है कि आँखकी ओटमें तुझे रहने दूँ, किन्तु पिताके समान अग्रजकी आज्ञा टालनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। मैं तेरी सेवासे बहुत सुखी रहा करता था किन्तु ईश्वरको यह स्वीकार ही नहीं था। अभी तुझे वहाँ जानाही पड़ेगा। पीछे उनके आज्ञानुसार मंगवा लूँगा।

वेद्वतीके बहुत आग्रह करनेपर भी मानभंजनने उसकी प्रार्थना नहीं स्वीकार की। अन्तमें विवश होकर वेद्वती पिताके घर जानेको तैयार हुई। बड़ी प्रसन्नताके साथ मनोरमाने उसे विदा

करनेकी तैयारी की। मुँहपर चिकनी चुपड़ी बातोंसे उसको प्रसन्न करना चाहा, किन्तु प्रसन्न नहीं कर सकी। वह उसको पहले ही ताड़ गयी थी, कुछ बोली नहीं। दूसरे दिन वेदवती पिताके घर भेज दी गयी।

उसको विदाकर मनोरमा सुखसे रहने लगी। हृषीकेशजी अध्यापकी करते थे और मानभंजन गृहस्थीके सब कार्योंको संभालता था। भोजनके अन्न-जल, फल-मूल इन्धन और पात्रादि संग्रह करना उसीका कार्य था, मनोरमा किसी प्रकार भोजन भर तैयार कर टाँग फैलाये सोयी रहती थी। किसी बातकी उसे चिन्ता फिकर थीही नहीं। इस प्रकार कुछ दिनोंतक वह अपना समय बिताती रही। मानभंजन जिस श्रद्धा-भक्तिसे पिता माताकी सेवा किया करता था उससे किसी अंशमें कम भाई और भाभीकी सेवा नहीं करता था। यद्यपि इस कार्यमें उसे कष्ट अधिक हुआ करता था, किन्तु कभी भूलकर भी कष्टको नाम मुखपर नहीं लाता। भाईकी अवस्थापर हृषिकेशजीको बड़ा दुःख हुआ, किन्तु अपनी धर्मपत्नीके भयसे इस विषयमें जीभ भी नहीं हिला पाते थे। मनोरमा इतनेपर भी पूरी प्रसन्न नहीं रही, जब तब मानभंजनको खरी खोटी सुनाया ही करती थी। किसी कार्यमें विलम्ब होनेसे वह उसपर बिगड़ बैठती थी। हृषीकेशजीकी माताको पुत्रपर हुए अत्याचार खटकने लगे। उनने कई बार मनोरमासे इस विषयमें कहा, किन्तु उसका ध्यान उस ओर आकर्षित ही नहीं हुआ।

सतीका सतीत्व।

कुमारी अरुन्धती अपनी अध्यापिका सावित्री और वेहुलाकी आज्ञासे अपनी वालसखी गीता और वेद्‌वतीके साथ मानस पर्वत की प्राकृतिक शोभा देखने गयी। वहां वह अपनी सखियोंके साथ उपवनके मनोरम दृश्य देखती रही। गीतानेसखी मनोरमाको मानस पर्वतपर आ मिलनेकी सूचना दी। सेविका का उसने समझा और सचेत कर दिया था कि वेद्‌वतीके आनेकी वात उसका नहीं मालूम होने पावे।

यथा समय गीताकी सेविका मनोरमाके घर पहुंची और कुशल मंगलादिके वाद उसने अपने आनेका कारण वताया। मनोरमा गीताकी आज्ञा टाल नहीं सकती थी क्योंकि वाल्यावस्था सेही उसके साथ उसका वैसाही स्नेह था। समाचार पातेही वह मानस पर्वतपर चलनेके लिये उतावली होने लगी। हृषीकेश पाठशालामें थे। मानभंजन लकड़ी लेकर जंगलसे आयाही था, भोजन भी तैयार नहीं हुआ कि मनोरमाने पर्वतपर चलकर सखी से मिलनेकी तैयारी करदी। जिस तिस प्रकार फलादिसे उदरदरी को भरकर मानभंजनको कह सुनाया कि तुमको अभी मेरे साथ इसी मानस पर्वतपर चलना होगा। मेरी सखी गीता वहां आयी हुई है। उसने मुझे वुला भेजा है। अतएव उसकी आज्ञा शीघ्र पालन करूंगी। अभीतक तुम्हारे भाई पाठशालासे नहीं आये हैं।

यदि उनके आनेमें अधिक देर हुई तो उनके आनेके पहले ही तुमको मेरे साथ चलना पड़ेगा ।

मानभंजन—किन्तु पिता मातासे आज्ञा ले लेनी पड़ेगी ।

मनोरमा—मैं उनसे आज्ञा ले चुकी हूँ ।

मानभंजनने शीघ्रता पूर्वक भोजन किया, तब तक हृषीकेशजी भी आगये । मनोरमाने मानभंजनके सामने ही अपनी सारी कहानी कहकर चलनेकी इच्छा प्रकट की । स्वामीको दो दिन के लिये आश्रममें रहनेका आग्रहकर अवकाशकी स्वीकृति करा देवरके साथ मानस पर्वतको ओर चली । मानभंजन चुपचाप उसके आगे आगे चला । मार्गमें विना प्रयोजन वह किसीसे कुछ बोला भी नहीं । मनोरमा गीताकी दासीके साथ बातें करती जा रही थी ।

अरुन्धती गीता और वेदवतीके साथ मानस पर्वतके लता-कुञ्जों तथा पुष्प पादपोंकी शोभा देख रही थी । उस अनुपम मानस पर्वतकी शोभा बड़ी विलक्षण और चित्ताकर्षक थी । जान पड़ता था कि ऋतुराज वसन्तने उसको अपना क्रीड़ा-क्षेत्र बना रखा है । उस पर उसका अटल साम्राज्य स्थापित हुआ सा दीखता था । उसके अनुपम दृश्यको देख चित्तका प्रसन्न होना स्वाभाविक है । लोनी लोनी लतायें लता-कुञ्जोंपर लहराया करती थीं । खिले अध-खिले सुमन समूहोंसे पुष्प पादप वनकी प्रसन्नताका परिचय दे रहे थे । कम ऊँची और समान शाखाओंमें अनेक प्रकारके समा-कार पुष्प ऐसी सुन्दरतासे सजे थे कि निकट आने परभी दर्शकों

को गलीचेका भ्रम हो जाया करता था। हरी भरी लहलही दूर्वाकी सब्जियोंसे सजे मैदानमे मखमली कालीन बिछी मालूम होती थी। पर्वतकी नुकीली चोटियां बर्फसे ढकी चांदीकी शिला-ओंसी चमकती थीं। उनपर दिवाकरकी दिव्य किरणें अपूर्व तेज दिखा रही थीं। विचित्र प्रकारके वन विहङ्गोंकी बोली हृदयमें अमृतकी डली घोल रही थी। सुमनोंके साथ अठखेलियाँ करता हुआ समीर सौरभसे वनको सुवासित करनेकी चेष्टा कर रहा था। प्रेमी भ्रमर खिले फूलोंकी गोदमें लोट पोट होरहे थे। अहा! कैसा अनोखा दृश्य था! कैसा चोखा भाव था! अरुन्धती इस दृश्यको देखकर मीना और वेदवतीके साथ पर्वतके प्राङ्गणमें एक सुन्दर पुष्करणीके स्वच्छ घाट पर बैठ उसका दृश्य देखना ही चाहती थी कि निकटकी एक बड़ी झाड़ीमें लप लपाती हुई दावाग्नि पर दृष्टि पड़ी। कौतूहलवश अरुन्धती अपनी सखियोंके साथ उस अग्नि क्रीड़ा-स्थलकी ओर बढ़ी। निकट पहुंचने पर उसे करुण-क्रन्दन सुन पड़ा। ध्यानसे सुनने पर मालूम हुआ कि किसी अबलाका आर्तनाद है। बड़ी तेजीसे आगे बढ़ निकट जा देखा कि चारो ओरसे दावाग्निसे घिरी हुई परपटके बीच एक युवती और युवक थरथरा रहे थे। युवक निश्चेष्ट खड़ा था और युवती "आओ! दौड़ो!! बचाओ!!!" कहती, चिल्लाती और विलाप कर रही थी। अग्नि शिखा चारों ओरसे बढ़ती हुई दोनोंको अपनी गोदमे समेटना चाहती थी। ज्यों ज्यों आगकी लपटें

लपकती जातीं त्यों त्यों युवती युवकके निकट सटती जाती थी। उस अग्निकी चहार दिवारीसे निकल आना असम्भव सा होगया था। युवक खड़ा खड़ा भगवानका ध्यान कर रहा था। जीवनकी आशा छोड़ अपने अन्त समयकी प्रतीक्षा घोर चिन्ताके साथ कर रहा था। युवती जोरसे चिल्ला रही थी। उसी अवसरपर गीता और वेदवतीके साथ अरुन्धती भी वहां पहुंच गयी। वेदवतीने उनके कण्ठ स्वरको पहचान कर अरुन्धती से कहा—"सखी! यह मेरी जेठानीका जैसा स्वर मालूम होता है।" गीताने गौरसे सुनकर कहा "सचमें उसीका कण्ठ-स्वर है।"

मानभंजनके साथ मनोरमा पर्वतपर आरही थी, पर्वतपर आने पर ध्यान किसी ओर रहने कारण उस दावाग्निके किलेमें घिर गयी। उससे निकलनेकी कोई युक्ति न देख प्राण-भयसे अधीर होरही थी। वेदवतीने आगकी भीनी लपटोंसे झांक कर देखा, अपनी भाभीके साथ खड़े मानभंजन हरिनाम जप रहे हैं। वेदवती पति-को विपत्तिमें फंसा देख बोली—"जब पतिदेवही अग्नि कुण्डमें जल मरेंगे तो इस तुच्छ जीवनसे मैं हो कौन सा लाभ उठाऊँगी?" इसके बाद हाथ उठा ईश्वरको साक्षी रखकर बोली—"ईश्वर! यदि मैंने स्वप्नमें भी पर पुरुषकी ओर आँखें नही उठायीं तो इस अग्नि कुण्डसे पतिकी रक्षा अवश्य कर सकूँ अन्यथा इसी अग्निमें जलकर अपने पापका प्रायश्चित कर लूँ।" वह अग्नि की चहार दीवारीको तोड़ती हुई उसमें प्रवेश कर गयी और बड़ी शीघ्रताके साथ अपने पति और अपनी जेठानीको ले अग्निके घेरेसे

पतिव्रता अरुन्धती

वह अग्निकी चहार दीवारीको तोड़ती हुई उसमें प्रवेश कर गई।

[देखिये पृष्ठ संख्या ३८

बाहर निकल आयी। ऐसा करनेमें उसको अग्निकी ज्वालासे किसी प्रकारकी हानि नहीं हुई। आगकी वह लपटें शीतल समीर सी प्रतीत हुईं, उसके साथ आनेमें मनोरमाको भी किसी प्रकारका भय नहीं हुआ वह भी निष्कलंक बच गयी। मानभंजन भी बेदाग निकल आये किसी प्रकारकी आंच नहीं आयी। यह देख मनोरमाको बड़ा आश्चर्य हुआ, वह वेदवतीको देख बोल उठी—"बहिन! इस विपत्तिसे तूने मेरी रक्षा की; मैं तेरे इस उपकारको कभी नहीं भूलूंगी। जीवन भर इस ऋण-बोझसे लदी रहूंगी।" मनोरमाको आगे देख गीता उसके गले लिपटकर बोली—"बहिन, पातिव्रत्यके प्रभावसे वेदवतीने इस भीषण अग्नि कुण्डसे तुम दोनोंको रक्षा की, इससे तुम्हें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। अपनी ऐसी बहिनको कष्ट पहुचानेवालीको कभी सुख नहीं हो सकता। अब अपने कियेपर पश्चात्ताप करो और वेदवतीको गले लगाओ। आशा है फिर कभी सतीका अनादर नहीं करोगी।" मनोरमाने गीताके मुखसे इतनी बातें सुननेके साथही पुनः वेदवतीको गले लगाकर कहा—"बहिन! यथार्थमे मैंने तुझे कष्ट पहुचाया है। इसलिये तेरे आगे क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है तू अपने सदय हृदयसे मेरे अपराधोंको क्षमा करोगी।" मनोरमाके मुखसे इतनी बातें निकलतेही वेदवती उसका चरण छूकर बोली—"जीजी! मेरे हृदयमें तुम्हारे प्रति वह श्रद्धा भक्ति है जो सन्तानको माताके प्रति हुआ करती है। मेरी भूलोंपर दृष्टि न कर दया करना। हो सकता है मुझसे अज्ञानावस्थामे कुछ भूलें हुई हों।"

मनोरमा—बहिन । तू साक्षात् देवी है, तुझसे कभी कोई भूल नही होती । हाँ मैं अकारणही तुझे कष्ट दिया करती थी, आशा है तू क्षमा करेगी ।

गीताने उसी समय मनोरमाको वेदवतीकी अध्यापिका अरुन्धतीसे परिचय कराया । अरुन्धतीके विमल उपदेशसे मनोरमाका मन मानस पवित्र और निर्मल हुआ । ज्ञाननेत्र खुले । माया और मोहका पर्दा हटा, स्वार्थका नशा दूर हुआ । जिस वेदवतीको आंखोंका कांटा समझती थी अब उसे अपनी आंखोंकी पुतली समझने लगी । अपने किये हुए पर पश्चात्ताप करती हुई उनसे भी क्षमा याचना करने लगी । तदनन्तर उन सबोंसे विदा मांग मानभंजन और वेदवतीको साथ लिये अपने आश्रमको वापस आयी । उसी दिनसे उसमें विचित्र परिवर्त्तन होगया सास ससुरकी सेवा सच्चे हृदयसे आदरके साथ करने लगी, पतिके साथ उसका वैसा ही व्यवहार होने लगा जैसा सच्ची पतिव्रताका हुआ करता है । मनोरमामें यह विचित्र परिवर्तन देख औरोंको आश्चर्य होने लगा । किन्तु आश्चर्य करनेकी आवश्यकता नहीं । इस परिवर्त्तनशील संसारमें बिगड़ते और सुधरते देर नहीं लगती । संगतिही एक ऐसी चीज है जो भलेको बुरा और बुरेको भला बनाती है ।

पाठकोंके आगे प्रमाण प्रत्यक्षही है कि सती श्रेष्ठा पतिव्रताकी संगतिसे बिगड़ती हुई मनोरमा सुधर गयी । उसकी डूबती हुई जीवन-नौका संगतिसेही किनारे लगी । धन्य सती! तुम्हारा सतीत्व धन्य है! एकदिन ऐसा था कि भारतमाताकी पवित्र

गोदमें एक नहीं अनेक ऐसी सती पुत्रियां अपने सतीत्व बलसे ब्रह्मा-के नियमको भी बदल सकती थीं। परिवर्तनशील समय-चक्रमें कैसी अद्भुत शक्ति है। समयके प्रबल प्रतापसे भारतमें ऐसा विचित्र परिवर्त्तन हुआ कि भारतीय अपने पूर्वजोंके प्राचीन कार्योंपर विश्वास करनेमें आगा पीछा करते हैं। अपने पूर्वजोंकी पौरा-णिक कथाओंपर इनकी कायरता विश्वासही नही होने देती। यदि वे उसे सत्य समझ उस लीकपर चलनेकी चेष्टा करते तो जो आर्य्यावर्त्त एक समय ज्ञानका भण्डार, बल विद्याका अवतार, धन प्रभुताका आगार, कला कौशलादिका श्रेष्ठ द्वार और स्वतंत्र-ताका विहार मन्दिर था, जहाँके वटु समुदाय सामगानसे आश्रम और ग्रामको गुंजाते रहते थे, वह आज वेद ज्ञान रहित, धर्मत्व वर्जित, विलासी, आलसी मनुष्योंका निवास भूमि नहीं होता। जो क्षेत्र पहले सत्य धर्मादि सद्गुण-सम्पन्न महात्माओंका लीला क्षेत्र था आज वह परतंत्रप्रिय समाज धर्महीन मनुष्योंकी क्रीड़ा भूमि नहीं होता। जहाँ त्रेता युगमें भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रके रूपमें अवतरित हो मनुष्योंको अपने कर्त्तव्यकी शिक्षा दे गये थे आज वह पुण्य क्षेत्र सनातनधर्म त्यागी पुरुष रूपी बरसाती कीड़ों से भरा नही होता। अभ्यागतका प्रबल प्रमाण तो यह है कि इन-को अपने इतिहासपर भी विश्वास नही, अपनी मातृ भाषासे प्रेम नहीं। संसारमें वह जाति जीवित नही रही है जिसने अपने इति-हास और भाषासे घृणाकर उसे त्याग दिया हो। जिस दिन से भारतमें ऐसे महापुरुषोंकी भरमार हुई उसी दिनसे यह अव-

नतिके गर्त्तमें गिरता जारहा है। और जबतक अपनी इस त्रुटिकी ओर ध्यान नहीं देगा तबतक इसके सुधरनेको भी कोई आशा नहीं है। जिस पवित्र भारतकी वन्दनीय गोदमें सीता, सावित्री, अनुसूया, वेहुला, दमयन्ती, अरुन्धती, चिन्ता प्रभृति एकसे एक बढ़ी चढ़ी पतिव्रता पुत्रियोंका प्रादुर्भाव हुआ जिनने जगतपिता ब्रह्माजीके नियमोंमें परिवर्त्तन कर दिया, आज उसकी उस पुनीत गोदमें कर्कश और अशिक्षिता आर्य ललनायेंही अधिकतासे देखी जाती हैं।संसार श्रेष्ठ स्वर्ग तुल्य भारतकी दुर्दशाका यही कारणहै।

अतएव देवियो ! उठो आँखें खोलो, अपनी उन आर्य देवियोंके पद चिन्हपर चलकर देशका मुख उज्ज्वल करो, अपने वन्दनीय चरित्रसे संसारको चकित कर दो। इस जागृत युगमें जबतक तुम अग्रसर नहीं होओगी; तबतक तुम्हारे आर्य पुत्र सफलता नहीं पावेंगे। अब कलह करनेका समय नहीं है। इस पारस्परिक कलहसे तुम्हारा अस्तित्व भी नहीं रहेगा। अपने कर्त्तव्य मार्ग-पर पातिव्रत्य अमोघ अस्त्रसे मार्गके कांटोंको काट गिराओ।

अरुन्धतीका विवाह॥
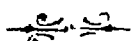
मैं अपने कथानकको छोड़ किसी दूसरी ओर बहक आया। पाठक पाठिकाओ! घवडाओ नहीं अब पुन: आपका ध्यान पतिव्रता अरुन्धतीके कथानककी ओर आकर्षित करता हूं। मनोरमा वेदवतीके साथ उन सबोंसे विदा हो अपने आश्रमको गयी, उसके जानेके वादही गीता भी अरुन्धतीसे घर चलनेके लिये आग्रह करने लगी। अरुन्धती अपनी सखी गीताके आग्रहको स्वीकार कर मानस पर्वतसे चलनेका विचार करने लगी। उस स्थानसे आगे बढ़ पर्वतपर लहलही लता कुंजोंमें होती पुष्प पादपोंको देखती आगे बढ़ रही थी कि सहसा उसकी दृष्टि सघन छायावाले वृक्ष-के नीचे बैठे हुए अद्वितीय रूपवान युवकपर पडी। युवकका गठीला शरीर, लम्बी लम्बी भुजा, उन्नत वक्षस्थल, चौड़ी ललाट, उत्फुल्ल कमल जैसा मुख-मण्डल, नवीन कमल कली जैसी बड़ी-बड़ी आंखें, तथा कामदेवके रूपको लज्जित करनेवाली कमनीय कान्ति देख अरुन्धती उसपर मोहित होगयी। उधर युवककी आँखें भी रतिके रूपको नीचा दिखानेवाली अरुन्धतीपर पड़ीं। अरुन्धतीका सर्वाङ्ग सुन्दर गठन, सुन्दर सुडौल मूर्त्ति, निष्कलङ्क चन्द्रमुख, धनुष जैसी तिरछी भवें, मृगा की आँखोंको अपमानितकरने वाली बड़ी बड़ी आंखें, नागिन सी लटें, युवावस्थाकी अधिकृत सौन्दर्य्यको सजीव प्रतिमासी भव्य

मूर्तिको देख युवक भी उसपर मोहित होगया। आंखें चार होते ही वे एक दूसरे पर रि६ गये। मनमथने दोनोंके मनको मथना आरम्भ किया। अरुन्धती अपनी सखी गीताकी आंखें बचा बहुत समय तक युवककी ओर सतृष्ण दृष्टिसे देखती रही युवक भी एकाग्र नेत्रोंसे युवतीको ओर देखता रहा। किन्तु एक दूसरेसे दूर ही रहकर आंखें बचा देखते रहे। दोनोंमें किसी प्रकार की बातें नहीं हुईं। गीताकी दृष्टि उस ओर गयी भी नहीं उसने युवकको देख भी नही पाया। अरुन्धती प्रेमके माया जालमें ऐसी उलझी कि वहाँसे निकलना भी कठिन होगया। वनस्थलीकी शोभा देखनेके बहाने गीताको उसने वहाँ बहुत देर तक ठहराया। उसकी वहाँसे चलनेकी इच्छा नहीं थी, किन्तु गीतासे इस विषयमें कुछ कहना भी अनुचित समझती थी। अन्तमे पश्चात्ताप करती हुई मन-ही-मन युवकके रूपपर बिककर, गीताके साथ आगे बढ़ी।

घर पहुँचने पर भी उसकी चित्त वृत्ति ठीक नहीं हुई। प्रेम की लगन ऐसी लगी कि भोजन और नींद भी भूल गयी। रातों दिन युवककी प्राप्तिकीही चिन्ता कर, समय व्यतीत करने लगी। ऐसा करनेसे उसका शरीर पीला और कृश होगया। उसकी वह अवस्था देख सखियोंको बड़ी चिन्ता होरही थी। वे सब उसके रूपमें विचित्र परिवर्त्तन देख घबड़ा रही थीं कि हाय! सहसा इस होनहार बालिकाको क्या होगया? इसका खिलता हुआ मुख-मण्डल अकारण ही क्यों मुर्झा गया?

अरुन्धतीको भी अपनी अवस्थाका ज्ञान हुआ। कुछ देरतक इस विषय पर विचार करनेसे आँखें खुलीं। उसके मनमें ऐसी कुवासनायें क्यों उठीं? सती पतिव्रताके लिये इससे बढ़कर चिन्ता की बातें हो ही क्या सकती हैं? किसी अपरिचित युवकके रूप पर मोहित होजाने वाले अपने उस स्वभावसे उसे घृणा हुई। लज्जासे उसका मुख विवर्ण होगया। आपही अपनेको धिक्कारती हुई आत्म-हत्याको तैयार हुई। मन-ही-मन कहने लगी, पिताने मुझ-को पातिव्रत्यकी पुनीत शिक्षा ग्रहण करनेको भेजा है और मैं ऐसी पापीयसी कुलकलङ्किनी निकली कि राह चलते युवकके रूपपर मोहित हो सतीके पवित्र यशको कलंकित करनेको तुली। इस तुच्छ जीवनसे क्या लाभ? जिससे संसार की भलाई किसी अंशमें न होसके, जो स्त्री इस प्रकार अपना पातिव्रत्य त्यागनेको तैयार है उसका जीवन ही व्यर्थ है। उसके मनमें उस युवकके रूपसे काम वासना क्यों उत्पन्न हुई? इसीकी चिन्तासे अरुन्धतीका शरीर गलने लगा। जिसने कुछ दिन पहले उसको देख लिया था वह उस समय उसे उस रूपमें देख पहचान भी नहीं सकता था। जिसके मुख पर ब्रह्मचर्यके साथ पातिव्रत्यकी प्रभा प्रसारित थी उसके उस वदन मण्डलको लज्जा और चिन्ता की प्रभासे आच्छादित देख किसको विषमय नहीं होता? शोक और चिन्तासे वह आधी होगयी। इस अवस्थामे अधिक दिन व्यतीत नहीं हुए थे कि उसकी शुभ चिन्ता करने वाली अध्यापिकाओं सावित्री और बेहुलाकी दृष्टि उस कुम्हलाये हुए वदनपर पड़ी। उन्होंने अरुन्धती

से उसके दुःखका कारण पूछा। इच्छा रहनेपर भी अरुन्धती अपनी अध्यापिकाओंके आगे अपनी बीती घटना नहीं कह सकी। लज्जासे मस्तक झुकाये खड़ी रही। सावित्री और वेहुला उसकी खिली हुई रूपकलीको असमय मुर्झायी देख बहुत दुखी हुईं। बार बार अरुन्धतीसे पूछने पर जब कुछ उत्तर नहीं मिला तब ध्यान कर देखने लगीं। ध्यान करनेसे उनको सब बातें मालूम होगयीं। सारी बातें ज्ञात होनेपर उनने अरुन्धती को सांत्वना देती हुई कहा—"बेटी! तुम इसके लिये किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करो। लज्जा संकोचकी भी कुछ आवश्यकता नहीं। हमें तुम्हारी सब बातें ज्ञात होगयीं। तुम्हारे पुनीत पातिव्रत्यमें किसी प्रकारका कलङ्क नहीं लगने पाया है। तुमसे ऐसा बुरा कार्य नहीं हुआ है जिसके लिये तुम इस प्रकारसे दुःख और चिन्ता किया करो। तुम उस दिन मानस पर्वतपर जिस पुरुष पुङ्गवको देखकर मोहित हुई थी वह तुम्हारे पूज्य पति थे, कोई दूसरे नहीं। पतिके रूपपर मोहित होने वाली स्त्री कुलटा नहीं कही जा सकती है। तुम विचारती होगी कि अभी तक मेरा विवाह तो हुआ ही नहीं फिर वे मेरे पूज्य पति कैसे हुए? हम अभी तुम्हारे इस भ्रमको भी दूर किये देती हैं, सुनो! तुम उस जन्म संध्याके नामसे प्रसिद्ध थी। महर्षि वशिष्ठजीके बताये हुए विष्णु मन्त्रसे चन्द्रभागा नदीके किनारे चारों युगोंतक घोर तपस्या कर विष्णुको सन्तुष्ट कर तुमने वर पाया कि संसारमें सबसे श्रेष्ठ पति व्रता हो, उसी समय विष्णुके आदेशानुसार महर्षिमेधातीथिके यज्ञमें

अपना प्राण त्यागते समय महर्षि वशिष्टको पति पानेकी कामना की थी। यज्ञ कुण्डमें शरीर त्यागने बाद तुम अरुन्धतीके रूपमें अवतरित हुई और महर्षि मेधातीथिसे पाली जाकर जगत पिताकी आज्ञासे यहाँ पातिव्रत्यकी शिक्षा प्राप्त करने आयी। मानस पर्वत पर वृक्षके नीचे समाधिस्थित युवक महर्षि वशिष्ट थे। आशा है अब तुम अपनी चिन्ताको भूल जाओगी। तुम्हारा दुःख सुख में परिणत होजायगा।

सावित्रीके मुखसे इतनी बातें सुनते ही अरुन्धतीका हृदय हर्षसे नाच उठा, हृदय सागरमें आनन्द की लहरें उठने लगी। उसे अपनी बातें स्मरण हो आयी। खोई हुई निधिके मिल जाने की अपार खुशी हुई।

सती पूज्या जननी सावित्रीको अरुन्धतीके विवाहका समय निकट आया प्रतीत हुआ उसी समय उनने जगत् पिता ब्रह्माके पास अरुन्धतीको लेजाकर सब बात उनसे कह सुनायीं।

ब्रह्माजीने उसी समय मेधातीथिको स्मरण किया। स्मरण करने के साथही वे वहाँ उपस्थित हो बोले, "पिता! क्या आज्ञा होती है।"

ब्रह्मा—महर्षि! अब आपकी पुत्री अरुन्धती विवाहके योग्य हुई। पवित्र पातिव्रत्यकी शिक्षासे पूर्ण दक्षा हुई। आप विश्वास रखें संसारकी पतिव्रताओंमें अरुन्धती ही सर्व प्रथम समझी जायगी। इसने अपने योग्य पति भी चुन रखा है। अतएव अब वेद विधिके अनुसार इसका विवाह-कार्य सम्पादन करनाही

उचित हैं। इसी उद्देशसे आपका स्मरण किया है। अधिक विलम्बकी आवश्यकता नहीं।

मेधातीथि—अरुन्धतीने किसको अपना पति चुना ?

ब्रह्मा—इसने ऋषि श्रेष्ट वशिष्ठजीको पति रूपमें वरण किया है। महर्षि वशिष्ठ जैसे ज्ञानी और दूरदर्शी ऋषि बहुत कम हैं। वे सब प्रकारसे अरुन्धतीके योग्य हैं। युगल जोड़ी सब प्रकार एक दूसरेके अनुकूल है।

मेधातीथि अपनी प्रति-पालित पुत्रीकी प्रशंशापर अत्यन्त प्रसन्न हो सावित्री और बेहुलाके आगे हाथ जोड़ सिर नवाकर बोले—"माताओं ! तुम्हारी शिक्षाके प्रभावसेही आज अरुन्धतीकी प्रशंसा सुननेमें आती है। तुम्हारीही कृपासे वह पातिव्रत्य जैसे गहन मार्गपर चलनेके योग्य समझी जाने लगी। सेवक इस ऋणसे जीवन भर उऋण नहीं हो सकेगा।"

सावित्री—मुने ! आपकी कन्या असाधारण बुद्धिमती है, उसने हमारी शिक्षासे ऐसा चमत्कार नहीं पाया है। यह उसके पूर्व संचित संस्कार हैं। विश्वास रखें पूर्वजन्मका संस्कार ही इस जन्ममें भी कार्यकर दिखाता है। हमारी शिक्षा केवल जगौनी मात्र थी।

मेधातीथिने उन्हें प्रणाम कर जगत् पिता ब्रह्मासे अरुन्धतीके विवाहके विषयमें पूछ तांछकी। ब्रह्मा अरुन्धती, सावित्री और मेधातीथिको लिये मानस पर्वतपर पहुंचे। वहां पहुंचकर उन्होंने त्रिलोकी नाथ शङ्करका स्मरण किया।

स्मरण करतेही योगीश्वर अपने गणोंके साथ उनके आगे उपस्थित हुए। ब्रह्माजीने बड़ी श्रद्धा-स्नेहसे उनका स्वागत किया। भूतनाथने उनसे सप्रेम निवेदन किया—"कमलासन! किस लिये मेरा स्मरण करनेका कष्ट उठाया है? मेरे योग्य सेवाके लिये सहर्ष आज्ञा कीजिये, मैं अभी पूर्ण करदूं। ब्रह्माजीने बड़े विनीत वचनोंमें अरुन्धतीको पूरा कथानक सुनाकर उसके विवाहके विषयमें निवेदन किया। ब्रह्माके मुखसे उसका कथानक सुन कर शिवजीने प्रसन्नता पूर्वक विष्णुका ध्यान किया। भक्तवत्सल भगवान शीघ्रताके साथ उनके आगे उपस्थित हो आदर पूर्वक उन से मिलकर बोले-"क्या आज्ञा होती है?" शिवजीने उनके आगे ब्रह्माजीके प्रस्तावको पुनः दुहराकर उसका समर्थन और अनुमोदन किया। भगवानने उसी समय प्रस्ताव पास कर उसे कार्य रूपमें परिणत करनेका विचार किया। उसी मानस-पर्वतपर वशिष्ठके साथ अरुन्धतीके विवाहकी तैयारी होने लगी। उसी समय ऋषि महर्षियों और देवी देवताओंको निमन्त्रण-पत्र शीघ्र शुभ कार्यमें सम्मिलित होनेके लिये भेजा गया। समाचार पाते ही देवी देवता, यक्ष, गन्धर्व और देव पुङ्गवोंसे पर्वत भर गया। विवाह मण्डप बनाया गया, बड़ी विलक्षणताके साथ मण्डपादि सजाया गया। यथा समय कुमारी अरुन्धती और महर्षि वशिष्ठ मण्डपमें लाये गये और वेद विधिके साथ हवनादि कार्य सम्पन्न कर अरुन्धतीका पाणि पल्लव महर्षि वशिष्ठजीके हाथ थम्हानेके पहले, भगवान विष्णुने

बड़ी प्रसन्नताके साथ अरुन्धतीको आशीर्वचन सुनाया—"पुत्री! तुमने अपने पातिव्रत्यके प्रभावसेही देवोंको प्रसन्न किया है। इसी पवित्र कार्यके बल ऋषियोंमें श्रेष्ट महर्षि वशिष्ठजीको अपना पति बनाया। मैं तुम्हारे इस कार्यसे तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ। इस प्रसन्नताके प्रमाण स्वरूप तुमको स्वर्ग द्वारपर अचल स्थान प्रदान करता हूँ। तुम अपने पूज्य पतिके साथ स्वर्ग द्वारपर अपना स्थान अचल कर अपनी विमल कीर्त्तिसे संसारको चकित करती रहोगी। पतिव्रता स्त्रियां तुमको अपनी पथप्रदर्शिका समझा करेंगी।"

विष्णु भगवानसे इस प्रकार आशीष पाकर अरुन्धती विशष हर्षित हुई।

ब्रह्माजीने तपोनिष्ठ वशिष्ठके हाथ अरुन्धतीके सौंपी जानेपर कहा "पुत्र, तुम्हारा विवाह पतिव्रता अरुन्धतीके साथ होगा। आशा है अरुन्धतीको पाकर विशेष प्रसन्न होओगे क्योंकि सौभाग्यवती सुशीला सब गुण सम्पन्ना स्त्री भाग्योदय होनेसेही मिला करती है। अरुन्धती जैसी पवित्र चरित्रवाली स्त्रियां संसार भर में नहीं सुनी जातीं।"

वशिष्ठ—पिता! यद्यपि मै विवाह बन्धनमें बंधना नहीं चाहता था तथापि आप लोगोंकी आज्ञा पालन करनेके निमित्त मुझको ऐसा करना स्वीकार है। इस कार्यसे मुझे विशेष प्रसन्नता है।

अरुन्धतीकी सखियां तथा सावित्री देहुलाने अरुन्धतीके अहिवात अचल रहनेका आशीर्वाद दिया। स्वयं सुरेश, चन्द्र, वरुण

कुवेर, अग्नि, धर्म प्रभृति सब देवतागण उस विवाहके अवसरपर उपस्थित हुए। आते कैसे नहीं जब स्वयं शूलपाणि शंकर, चक्रधर विष्णु और कमलासन प्रजापतिही विवाह कार्य कराने बैठे थे? मानस पर्वत देवताओंके समागमसे विलक्षण दृश्य धारण किये स्वर्गको भी नीचा दिखा रहा था। विवाहके समय वर कन्याका वल्कल वस्त्र दूर कर बहु मूल्य रेशमी वस्त्र दिया गया, बहु मूल्य भूषणोंसे कन्याका प्रत्येक अंग अलंकृत किया गया। बड़े बड़े राजा महाराजाओंको जो मणि मुक्ता अलभ्य थे ऐसे अगणित मणि मुक्ताओंसे वर कन्या सुशोभित थी। वर कन्याकी युगल जोड़ी हर पार्वती या विष्णु लक्ष्मीकी अनुपम जोड़ी जैसी सुशोभित होरही थी। अहा! कैसी अनोखी झांकी है, कैसी चोखी छटा है, कैसा अपूर्व दृश्य है! उस स्वर्गीय सौन्दर्यके वर्णन करनेकी शक्ति लेखककी इस लेखनीमें नहीं है।

विवाहके समय संसारके सब तीर्थोंका जल आह्वान करके ब्रह्माजीने मानस पर्वतपर ला रखा था। विवाह कार्य आरम्भ होनेके पहलेही वेद मंत्रों द्वारा वर कन्याको मान्दाकिनीके पवित्र जलमें स्नान कराकर मण्डपमें बिठाया गया। देव गुरु बृहस्पतिजीने मंत्रोच्चारण पूर्वक विवाहकी विधि आरम्भ की। मेधातीथि कन्यादान करनेके लिये आचार्यके आसनपर बैठे। अग्निको साक्षी रख वेद मंत्रके अनुसार कन्याका पाणिपल्लव वरके हाथपर रखा गया। उस समयका दृश्य बड़ा अपूर्व मालूम होता था। वेद मंत्रके द्वारा उस विलक्षण प्रेम बन्धनमें अजीब चमत्कार था। दो प्राण

एक होरहे थे, दो शरीरका भार एकपर सौंपा जारहा था । यथार्थमें बड़े उत्तर दायित्वका भार वरके हाथ सौंपा जारहा था । 'स्वस्ति' उच्चारणके साथ वशिष्ठजीने मेधातीथिसे कन्यादान लिया और उन की कन्याका भार अपने ऊपर उठाया ।

यों तो आजकलके अनेक नवशिक्षित विवाह बन्धनको बन्धन नहीं समझते उनकी धारणा है कि यह विलासकी सामग्री ग्रहण की जाती है, विचार कर देखनेसे प्रतीत होगा कि यह कितने उत्तर दायित्वका कार्य है । वे जितनाही सहल समझते हैं यह उतनाही कठिन है ।

अरुन्धतीको वशिष्ठके हाथ सौंप आशीर्वाद देकर त्रिदेव अपने २ स्थानको गये । देवतागण भी आशीर्वचनके बाद अपने अपने स्थानके लिए विदा हुए । मेधातीथिजीने सबको बड़े सत्कारके साथ विदा किया ।

सती सावित्री और बेहुलाने अरुन्धतीको पातिव्रत्यके पवित्र मार्गमें पैर बढ़ानेका शुभ वचन सुना अपने मन्दिरकी ओर प्रस्थान किया ।

महर्षि वशिष्ठ विष्णुके प्रदान किये हुए अपने नवीन स्थान-पर जा विराजे, पतिव्रता अरुन्धती स्वामीकी अनुगामिनी हुई । महर्षि मेधातीथि कन्याको जामाताके हाथ सौंप अपनी कुटीको लौट गये । उस दिनसे उनके शरीरमें कुछ अधिक स्फूर्त्ति सी प्रतीत होने लगी, सिरका बोझ हलका सा ज्ञात हुआ । यथार्थमें कुमारी कन्या जब तक योग्य पात्रके हाथ अर्पित नहीं

की जाती है तबतक गृहस्थोंके सिरका बोझ हलका होताही नहीं। मेधातीथि अरुन्धतीको योग्य पात्रके हाथ सौंप बहुत प्रसन्न हुए। उसी समयसे मानस पर्वतकी महत्ता बहुत बढ़ गई, पतिव्रत के प्रभावसे संसारके सब पुण्य तीर्थोंके जलसे शिक्त होनेपर वह विशेष पवित्र होगया। देवताओंकी दृष्टिमें वह संसारके सब पुण्य स्थानोंसे अधिक पवित्र समझा जाने लगा।
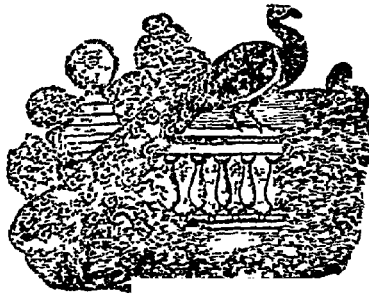
अरुन्धतीकी पतिसेवा।

सती अरुन्धती अपने पूज्य पति देवके साथ विष्णु प्रदत्त आश्रममें आकर पति सेवामें लीन रहने लगी। महर्षि वशिष्ठ अरुन्धतीको स्त्री रूपमें पाकर विशेष प्रसन्न रहने लगे। पूज्य पति-की सेवा अतिथिका आदर, आश्रमके कार्य प्रभृतिको वह ऐसी उत्तमतासे संभाल लिया करती थी कि ऋषिवरको कभी किसी कार्यके लिये प्रयास भी नहीं करना पड़ता था।

नित्य ऊषा उदयसे प्रथमही अरुन्धतीकी नींद खुलती, ऋषि-की आंख खुलनेके पहलेही वह आश्रमको साफ कर लेती। पति-देवके लिये जल पात्र साफ कर जल रख दिया करती, मुनि पुङ्गव वशिष्ठ ज्योंही उठते त्योंही उनके आगे मुँह धोनेके लिये जल लिये खड़ी रहती। महर्षि शौचकार्यसे निवृत होने बाद जलाशय की ओर जाते इधर यह उनके पूजा पात्रको माँज मूंजकर साफ करती, पुष्प संग्रह करती, आश्रम लीप पोतकर परिष्कृत करती, हवनके लिये हवन वस्तुओंका आयोजन करती, भोजनके लिये फल मूल तैयार रखती। उधर महर्षि प्रातःकालके नित्य कर्मोंसे निवृत होकर स्नानादिसे अवकाश पा आश्रममें आ पूजापर बैठते। अरुन्धती पूजा सामग्री उनके आगे रख श्रद्धा पूर्वक पूजन कर्मको ध्यानसे देखती रहती। तदनन्तर उनके लिये भोजन तयार कर आदर और प्रेमसे पतिको भोजन करा आप उच्छिष्ट

भर प्रसाद् स्वरूप पा लिया करती। भोजनादिसे निवृत हो पति देवके आगे बैठ नारी धर्मके विषयमें उपदेश सुना करती। यों तो अरुन्धती स्वभावसेही आदर्श सती थी तिसपर भी सावित्री और बेहुला देवीकी शिक्षा और ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठ जैसे पतिके उपदेशसे उस "सोनेमे सुगन्धवाली" कहावत चरितार्थ हुई।

अवसर पानेपर अरुन्धती ऋषि महर्षियोंकी बेटी वधुओंको स्त्री कर्त्तव्यका उपदेश दिया करती थी। युवतियां पतिव्रता अरुन्धतीके अमृतमय उपदेशसे अत्यन्त तृप्त रहा करती थीं।

महर्षि वशिष्ठ अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीके साथ कभी-कभी तपोवनोंमें भी भ्रमण करने जाया करते थे। वनमे भी वह पति-देवकी सेवासे कभी पीछे नही रहती।

एक समय पतिव्रता अरुन्धती अपने पतिदेवके साथ तपोवन-मे सेवा कार्यमे लीन थी। संयोगवश उसी मार्गसे महाराज गाधि पुत्र युवराज विश्वामित्रका रथ शिकारकी ओर आगे बढ़ रहा था। युवराज रथसे मुनिके आश्रमकी ओर संकेत कर अपने सारथीसे बोल उठे—"सारथी! यह पवित्र आश्रम किस मुनि श्रेष्ठका है?

सारथी—महाराज! ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठजीका यह पवित्र आश्रम है।

वशिष्ठजीके प्रति युवराजको पहलेहीसे श्रद्धा थी, नाम सुनते ही वे रथसे उतर आश्रमकी ओर चले। युवराजको आश्रमकी ओर आते देख वशिष्ठजी पहलेसेही स्वागतके लिये तैयार हुए।

अरुन्धती अतिथि सत्कारके लिये उपयुक्त वस्तुओंके संग्रहमें लगी।

आश्रममें पहुँचकर युवराजने आदरके साथ दम्पतिको प्रणाम किया। बड़े सत्कारसे महर्षिने युवराजको अपने आगे आसन दे बिठाकर, कुशल प्रश्न पूछनेके बाद, उस रात आश्रममें रहनेके लिये इस प्रकार निवेदन किया। "युवराज! यदि आप आज रात भर इस पर्ण कुटीरमें विश्राम करें तो मुझ दरिद्रको अतिथि-सेवाका अच्छा अवसर मिले। मेरी धर्म पत्नीका यही अनुरोध है। आशा है आप इसे स्वीकार करनेमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं समझेंगे।"

विश्वामित्र—ऋषिराज! मैं आपके दर्शनसे कृतार्थ होगया, अब अधिक कष्ट उठानेकी आवश्यकता नहीं। ऐसा होनेसे आपके भगवत् भजनमें बाधा पहुंचेगी, आप महात्माओंका चरण रज पाकरही हमारे जैसे संसारी मनुष्योंको कृतार्थ होना चाहिये।

वशिष्ठ—युवराज! ऐसा होही नहीं सकता, मेरी धर्मपत्नीका नियम भंग न कीजिये, संध्या समय आये अतिथिको वह जाने नहीं देती। आज आपको यहाँ ठहरना होगा, आप कष्टके लिये चिन्ता न करें। मेरी ओर देख फल मूलके भोजनसे सन्तुष्ट रह आश्रमका धर्म निबाहें।

अतिथि सत्कारसे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा धर्मही नहीं है। इससे मेरे धर्म कर्ममें बाधा नहीं पहुँच सकती। अतिथिका आसन भगवानकेही समान है। अतिथि चाहे किसी कुलका क्यों न हो देवताके समान पूज्य है।

विश्वामित्र—मैं युवराज हूँ, मेरा धर्म है कि तपोवनमें घूम-घूमकर तपस्वियोंकी रक्षा करूँ। यज्ञ तप जपादिमें उन्हें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पहुंचे इसी उद्देश्यसे पिताकी आज्ञा पालन करनेके लिये वनमें भ्रमण कर रहा हूँ। मैं किसीका अतिथि नहीं हूँ।

वशिष्ठ—राजकुमार! जो किसीके आश्रममें उपस्थित हो चाहे वह दरिद्र हो अथवा महाराज पर उस समय वह उसका अतिथि है। अतिथि सत्कारका फल बड़ाही उत्तम है। आपको स्मरण होगा कि भगवानने क्षीर समुद्रमें भृगुजीका पाद प्रहार क्यों सह लिया था? महाराज अम्बरीषने महर्षि दुर्वासाके लिये एक वर्ष-का उपवास क्यों किया था? महाराज मोरध्वजने पुत्रके मस्तक पर अपने हाथसे आरा क्यों चलाया था? अतिथि सेवाको सब धर्मोंसे श्रेष्ठ समझ ऐसा किया गया था। अतएव आप मुझे इस धर्म फलसे क्यों वंचित करना चाहते हैं?

विश्वामित्र—आपका कहना यथार्थ है। किन्तु......

वशिष्ठ—फिर किन्तु परन्तु क्या? आपको कष्ट स्वीकार करनाही पड़ेगा।

विश्वामित्र—मैं श्रीचरणका सेवक हूँ, सदा सेवाके लिये तैयार हूँ किन्तु अभी चलनेकी आज्ञा दीजिये मेरे साथ सेना-सामन्त बहुत हैं।

वशिष्ठ—उसके लिये चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं फल मूलोंसे उनकी सेवा की जायगी। इसमें सन्देह नहीं कि राज

प्रासाद जैसा सुख उन्हें प्राप्त नहीं होगा, किन्तु कष्टके विचारसे किसीकी सेवा नहीं स्वीकारना यह भी उचित नहो है। वनैले कन्द मूलोंके स्वादकोही देखिये। राजमहलकी कोमल वहु मूल्य शय्याके बदले कुशासन और मृग छालोंपरही विश्राम कीजिये। अप्सराओंके कोमल सुरीले गानके बदले आज वन पक्षियोंकेही गानको श्रवण कीजिये।

इस प्रकार महर्षि वशिष्ठके वहुत आग्रह करनेपर युवराज विश्वामित्रने उनके आश्रममें रहना स्वीकार किया। सारथीको रथसे घोड़े खोलनेके लिये आज्ञा दी। सेनापतिको वुलाकर सेनाओंके ठहरानेका आदेश दिया। मैदानमें तम्बू कनात खड़ी की गयीं। युवराज विश्वामित्रने सेनापतिको यह भी ताकीद कर दी कि "यह महर्षि वशिष्ठका तपाश्रम है ऐसा न हो कि कोई किसी प्रकारकी अनाधिकार चेष्टा करें। कोई फल मूलोंको न उठावे आश्रम आश्रित मृगशावकों पर हाथ न उठावे।

युवराजके आज्ञानुसारही सेनापतिने सबको सावधान कर दिया।

विश्वामित्र सायंकालीन संध्यासे निवृत होने वाद इसी विचार में लीन थे कि आज ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठजीने मेरी सारी सेनाओंको ठहरा लिया है, किन्तु इतने मनुष्योंके भोजनादिका प्रवन्ध कैसे करेंगे? छोटी सी गौ लेकर मुनिराज रहते हैं ऐसी अवस्थामें भी आग्रह पूर्वक मेरी सारी सेनाको ठहरा रखे हैं।

इधरका तो यह समाचार था और उधर महर्षि वशिष्ठजी

अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीसे उन सबोंके भोजनादिके लिये परामर्श कर रहे थे।

वशिष्ठ—मैंने आग्रह पूर्वक युवराज विश्वामित्रको अपने आश्रममें ठहराया है। अब ऐसी युक्ति होनी चाहिये जिससे उनको किसी प्रकारका कष्ट न हो।

अरुन्धती—आप उसकी चिन्त न करें भगवानकी कृपासे राजकुमारको किसी प्रकारका कष्ट नहीं होगा।

वशिष्ठ—स्त्रियाँ पातिव्रत्यके प्रभावसे सब कुछ कर सकती हैं।

अरुन्धती—नाथ! आप मुझे ऐसी बातोंसे लजाया न कीजिये ईश्वरने कृपाकर आपको कामधेनुकी पुत्री नन्दिनी गौ प्रदान की है उसीसे सब काम हो जायँगे।

यथार्थमें ऋषिराजकी नन्दिनी इच्छित फल देनेवाली थी। अरुन्धती उसके आगे उपस्थित हो बोली—"नन्दिनी! तुम्हारेही बलपर प्राणनाथने युव राजकी असंख्य सेनाओंको अपने आश्रममे ठहराया है। आशा और विश्वास है कि तुमसे उनकी सारी आशायें पूरी होंगी। सैनिकोंको किसी प्रकारका कष्ट नही हो, वे इच्छित भोजन और आराम पावें। महाराज कुमारको किसी प्रकारकी असुविधा नहीं हो।"

अरुन्धतीका कहना पूरा हुआ नन्दिनीके अंगसे सैकड़ों स्वयं सेवक निकलकर राजकी सेनाओंकी सेवामे लगे। युवराजसे ले छोटे अनुचर तकके लिये उनकी इच्छाके अनुकूल प्रबन्ध होते देर नहीं लगी। उन अतिथियोंके भोजनादिका प्रबन्ध भी उनकी

इच्छाके अनुसार हुआ। भोजनकी चीजें उनके खीमेमें पहुंचा दी गयीं। महर्षि वशिष्ठ बड़ी शिष्टताके साथ उन सबोंके निकट जा जाकर नम्र और मधुर वचनोंसे भोजनादिके लिये निवेदन करते थे।

महर्षिका आतिथ्य सत्कार और प्रबन्ध व्यवस्था देखकर विश्वामित्रजी तथा उनके वीर सामन्त सब चकित होरहे थे। इस प्रकार का राजसी प्रबन्ध देखकर विश्वामित्रजीको बड़ा आश्चर्य होरहा था कि पर्ण कुटीरमें रहनेवाले दरिद्र तपस्वीने ऐसा सुप्रबन्ध कैसे किया? बड़े बड़े राजा महाराज ऐसी सुव्यवस्था नहीं कर सकते हैं, एक दरिद्र तपस्वीके पास इतनी चीजें और सेवक कहांसे आये। अवसर पाकर उन्होंने वशिष्ठजीसे कहा—"ऋषिराज! आपका प्रबन्ध देखकर मैं चकित होरहा हूं"। आजतक राज प्रासाद-में मेरी सेनाओंको ऐसा भोजन तथा आराम नहीं मिला था। आपकी पर्ण कुटीरमें उससे कहीं अधिक आराम और सुख मिला, किन्तु क्या आप यह बताने की कृपा करेंगे कि ऐसा उत्तम प्रबन्ध आपने कैसे किया? इस जन हीन वनमें आपको इतने सेवक कैसे प्राप्त हुए? भोजनकी ऐसी उत्तम चीजें कहां मिलीं?"

वशिष्ठ—राजन्! भाग्यवान पुरुष वृक्षके नीचे रहनेपर भी वैसाही सुख पाते हैं जैसा उनको राजप्रासादमें मिला करता है। आपकी सेवामें जितनी चीजें उपस्थित की गयीं, वे आपकेही भाग्यबलसे यहाँ प्राप्त होसकीं, इसमें मेरी कुछ विशेषता नहीं है।

विश्वामित्र— ऋषिराज! आपके सत्कार बोझसेमैं दब

रहा हूं, आप धन्य हैं। आपकी धर्मपत्नी पतिव्रता अरुन्धती धन्य हैं, जिनकी सहायतासे आप ऐसे ऐसे अवसरमें अपनी अलौकिकताका परिचय दे दिया करते हैं । आपसे एक विशेष प्रार्थना है, आशा है मेरी प्रार्थना स्वीकार करनेकी कृपा होगी ।

वशिष्ठ—आप क्या कहना चाहते हैं ?

विश्वामित्र—यही जानना चाहता हूँ कि इन चीजों के लिये आपने प्रवन्ध कैसे किया ?

वशिष्ठ—आपकी कृपासे सब चीजोंका प्रवन्ध मेरी धर्मपत्नी अरुन्धतीने नन्दिनीकी सहायतासे ही किया। आप भली भांति समझते होंगे कि गौ माताकी सेवासे देशका कितना उपकार होता है। मेरी धर्मपत्नी अरुन्धती नन्दिनीकी सहायतासे आपकी किंचित सेवा कर सकी। पतिव्रता स्त्रियोंके प्रवन्धसे गृहस्थका घर स्वर्गसे कम सुख दायक नहीं हुआ करता।

विश्वामित्र—(स्वगतमें) यदि महर्षिको नन्दिनीमें इतना गुण है तो वह किसी राजा महाराजाके योग्य है। इस तपस्वी-को उसकी क्या आवश्यकता है ?। अतएव मुनिसे गौ मांग लेनी चाहिये। यदि किसी प्रकार वे स्वीकार न करें तो वल प्रयोग कर कार्य लेना चाहिये ।महर्षि वशिष्ठकी धर्मपत्नी यथार्थमें आदर्श महिला रत्न है। सच है गृहलक्ष्मियाँ यदि सच्ची गृहलक्ष्मीयाँ वास्तवमें हों तभी मंगल है। (प्रकटमें) महर्षि वशिष्ठजी! आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ आशा है इसपर विचार कर स्वीकार करने में विलम्ब न करेंगे।

वशिष्ठ—क्या आज्ञा होती है? मेरे योग्य कार्य होगा तो मैं अवश्य और शीघ्र पालन करूँगा।

विश्वामित्र—आप नन्दिनीको मुझे दे दीजिये, यह आपके योग्य नहीं है। इसकी शोभा राज प्रासादमें ही अधिक होगी। और आपको इसकी उतनी आवश्यकता भी नहीं है। यदि इसके बदलेमें आपको धनरत्नकी आवश्यकता हो तो इच्छित धन ले सकते हैं। आपके लिये मैं अपने कोषको खोल दूँगा।

वशिष्ठजी गम्भीरताके साथ बोले—राजन! यह विचार पूर्वक नहीं कहा गया है। नन्दिनीके बदले सारे संसारका राज्य भी मिले तो वह त्याज्य है। आप लोभ न करें, लोभ ही हानि और अनर्थकी जड़ है; संसारका अनिष्टकारक लोभही है।

विश्वामित्र भौंहें तान कर बोल उठे—आप सोच विचार कर मेरी आज्ञा उल्लंघन करें, यदि विनयसे कार्य नहीं चलेगा तो मुझे बल का प्रयोग करना पड़ेगा। आप मेरी प्रजा हैं अतएव आप को इतना अभिमान नहीं करना चाहिये।

वशिष्ठ—तपस्वी तुम्हारे जैसे राजासे डरनेवाला नहीं है। तुम मुझसे बलपूर्वक नन्दिनीको लेनेकी धमकीसे भयभीत करना चाहते हो? विश्वास रखो तुम्हारा बल मेरे तपबलके आगे तुच्छ है।

इतनी बातें सुनतेही विश्वामित्रजीका मुखमण्डल क्रोधसे तलमला उठा, आँखें लाल और भवें तन गयीं। क्रोधित हो बोले—यदि अपना मंगल चाहते हो तो नन्दिनी दे दो अन्यथा किये का फल पाओगे।

वशिष्ठ—तुम जो कुछ करना चाहो करो, लेकिन नन्दिनी नहीं दूंगा। अन्यायपर कमर कसने चले हो उसका प्रतिफल अवश्य और शीघ्र मिलेगा। विश्वामित्र क्रोधितहो अपने शिविरकी ओर चले गये और वशिष्ठजो अपनी धर्म पत्नीसे बोले—प्रिये! विश्वामित्र अन्यायसे काम लेना चाहते हैं। अपनी सेनाओं द्वारा नन्दिनीका हरण करना चाहते हैं।

अरुन्धती—हम सबोंकी रक्षा करने वाले परमात्मा हैं, आपको विना प्रयोजन कष्ट पहुंचानेवाला कभी सुखी नहीं रहेगा।

वशिष्ठ—यदि उनकी सारी सेना नन्दिनीके लिये टूट पड़े, तुम्हारे सौन्दर्यपर मोहित हो तुम्हारी ओर भी हाथ बढ़ावेगा तो मैं अकेला क्या कर सकूंगा?

अरुन्धती—नाथ! आप घबड़ाये नहीं। अकारण अबलाओं पर हाथ उठानेवाला संसारमें कभी सुखसे नहीं रह सकता। पतिव्रतापर बुरी दृष्टि डालनेवालेका क्षय शीघ्रही होता है।

वशिष्ठ—तिसपर तुम्हारी ओर आंखें उठानेवाले तो नपुंसक ही हो जायंगे।

अरुन्धती—यह आपको किसने कहा?

वशिष्ठ—तप बलसे ज्ञात कर लिया था। तपस्वियोंसे कुछ छिपा नहीं रहता।

अरुन्धती—तब फिर घबड़ानेकी कोई बातही नहीं आपका इस मामूली राजासे कुछ नहीं हो सकता।

वशिष्ठजी अरुन्धतीका बातोंका उत्तर देनाही चाहते थे कि

विश्वामित्रकी सारी सेनाओंने उनकी कुटी घेर ली। उनको ऐसा करते देख अरुन्धती पतिके निकट खड़ी हो क्रोध भरी दृष्टि से सेनाओंकी ओर देखने लगी। बड़े बड़े वीरोंने वीरताका परिचय देनेके लिये नन्दिनीको बल पूर्वक खूंटेसे खोल लेनेका यत्न किया। अरुन्धतीने उनको हट जानेके लिये कहा किन्तु उनने एक नहीं सुनी। बड़ी डपटें सुनाते आगे बढ़ नन्दिनीको खींचकर ले चले। युवराज विश्वामित्र भी उस स्थानपर उपस्थित हो बोले, तपस्वी! अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। यदि तुम इसके पहले मुझसे कुछ मांगना चाहते हो तो अब भी समय है, किन्तु नन्दिनी अब किसी प्रकार तुमको नहीं मिलेगी।

वशिष्ठ—मैं किससे मांगूँ? और क्या माँगू? फिर भी कहे देता हूं? कि नन्दिनी मेरी है। तुम अनाधिकार चेष्टा न करो।

विश्वामित्र—मैंने तुम्हारी नन्दिनीपर अपना अधिकार जमा लिया। इतना कहने बाद सैनिकोंकी ओर मुड़कर बोले—"वीर सैनिकों, बल पूर्वक नन्दिनीको अपने साथ ले चलो।"

सैनिकोंने पहलेही नन्दिनीको खूँटेसे खोल लिया था। अपने युवराजकी आज्ञा पातेही वे उसे घसीटने लगे। नन्दिनी रुक गयी इससे वे सब और उत्तेजित होगये। अरुन्धतीसे गौकी मार देखी नहीं गयी। वे अधीर हो बोल उठीं—"भगवान पतिव्रताकी लाज रखिये, इन दुष्ट राज सैनिकोंसे गौकी रक्षा कीजिये। अबलापर अत्याचार होरहा है, दीनानाथ! अब देर न कीजिये।"

ईश्वरने अरुन्धतीकी पुकार पर ध्यान दिया, देखतेही देखते

नन्दिनीकी रक्षामें असंख्य वीर शस्त्रोंसे सुसज्जित हो विश्वामित्र-की सेनाओंपर आ धमके। दोनों ओरसे घोर युद्ध हुआ, विश्वा-मित्रकी सेनाने गहरी हार खायी, गौको छोड़ प्राण भयसे वे इधर उधर भाग गये। विश्वामित्रजी स्वयं भय खाकर पीछे हटे।

इस प्रकार हार खाकर विश्वामित्रकी सेनाओंके भाग निकलने पर नन्दिनी निर्भय वशिष्ठजीके आश्रममें रहने लगी। अरुन्धती पूर्ववत प्रसन्नता पूर्वक पति-सेवामें लीन हो समय व्यतीत करने लगी। अपने आश्रमके आवश्यक कर्मके बाद कुछ समय तक अरुन्धती तपस्वियोंकी कन्याओंको शिक्षा देनेका कार्य भी किया करती थी। पति-सेवाके पुरस्कारमें ईश्वरने उन्हें योग्य पुत्र प्रदान किया। जबसे अरुन्धती पुत्रवती हुई तबसे कुछ विशेष प्रसन्न रहा करती थी। यों तो सर्वदाही उसके मुखमण्डल पर शान्तिकी गम्भीरता छायी रहती थी। उसकी मधुर वाणी सुनकर किसका चित्त प्रसन्नताको प्राप्त नहीं करता होगा? वनवासिनी मुनि-कन्याओंको अरुन्धतीकी संगति अत्यन्त सुखदायक प्रतीत होती थी। इस प्रकार सुखसे कुछ दिन और बीत गये। विश्वामित्रजी उस दिन वशिष्ठजीसे हार खा, लज्जित हो घर गये और राजपाट त्याग सन्यास ले तप कार्य में लीन हुए। तपस्या अधूरी छोड़ मुनिवशिष्ठसे बदला लेनेके लिये पुनः उनके आश्रममें उपस्थित हुए। महर्षि वशिष्ठ उस समय सरिताके पुलिन पर सायंकालीन संध्या कर रहे थे, आश्रममें उनकी धर्मपत्नी अरुन्धती और मुनि-कुमार थे। विश्वामित्र आश्रमके द्वार-

पर उपस्थित हो जोरसे पुकारने लगे। अतिथी समक्ष अरुन्धती आगे आ बोली—"आप कृपाकर कुछ समय तक बैठनेका कष्ट स्वीकार करें वे सन्ध्या पूजासे अवकाश पा सेवामें शीघ्र उपस्थित होंगे।"

विश्वामित्र क्रोधसे अग्नि हो रहे थे, उनकी भयंकर सूरत देखकर भय भी भय खा रहा था। किन्तु पतिव्रताको कुछ भी भय नहीं हुआ। वह सिर नीचा किये अपने वचन केउत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठ आश्रमकी ओर आ रहे थे, मुनिवेशमें विश्वामित्रको देख कर बोले—"आश्रममें चल कर आतिथ्य स्वीकार करें बाहर क्यों खड़े हैं?"

विश्वामित्र—अपना पुराना बदला चुकानेके लिये उपस्थित हुआ हूं। इन अमोघ अस्त्रोंसे तुम्हारा प्राणान्त करूंगा, देखूं पतिव्रता पत्नीके धर्मबलपर कबतक ठहरते हो, आज नन्दिनी भी लेली जायगी, सावधान होकर युद्धके लिये आगे बढ़ो।

वशिष्ठजी गम्भीर स्वरमें बोले—"राजन! आप अकारणही क्रोध कर रहे हैं। मैंने आपका कुछ नुकसान नही किया, फिर मुझसे छेड़ छाड़ करनेकी आवश्यकता न रहनेपर भी इस प्रकार युद्धको आड़टे हो? मैं तपस्वी हूँ, मुझको युद्धकी क्या आवश्यकता है?"

विश्वामित्र—युद्ध करना ही पड़ेगा, उसी दिन से मैं तुम्हारे साथ युद्धके लिये तैयार था। तुमने मुझे अपमानित कर युद्धकी चुनौती दी है। आज अपने उन रक्षकोंको पुकारा वे तुम्हारी रक्षाके लिये आवें।

वशिष्ठ—दीनोंकी रक्षा करने वाले दीनानाथ हैं, तू अस्त्र-

शस्त्र चलाकर देख ले कि वे रक्षा करने आते हैं या नहीं! तुम्हारे जैसे अत्याचारियोंके अत्याचारसे दीनोंकी रक्षा वे नहीं करते तो सृष्टिका अन्त बहुत पहले हुआ रहता।

वशिष्ठकी बातें सुन विश्वामित्र क्रोधसे काँपते हुए उनपर विषैले बाणोंकी वर्षा करने लगे। महर्षि वशिष्ठजी अपनी रक्षाके लिये भगवानका नाम लेकर अपना ब्रह्मण-दण्ड आगे खड़ाकर बोले—"तुम्हारे सभी शस्त्रोंका निवारण इसी दण्डसे होगा।"

विश्वामित्रने जितने बाण चलाये सबके सब उसी दण्डपर गिरकर चूर हो गये। उसने वशिष्ठ जी को अपने तीक्ष्ण बाणोंका निशाना बनाना चाहा, किन्तु उनके सारे उद्योग व्यर्थ हुए। चुम्बक की तरह दूरसेही उनके तीखे अस्त्रों को खींच, दण्डने जलाकर भस्म कर दिया। अपना सारा प्रयास व्यर्थ जाते देख विश्वामित्रजी लज्जित हो घोर काननमें प्रवेश कर गये। मन-ही-मन उन्होंने तपबल की प्रशंसाकर, उसीकी प्राप्तिके लिये घोर तपस्या की, तपस्या पूर्ण होनेपर भी विश्वामित्रजीके हृदयसे वह वैर-भाव नहीं गया। उन्होंने वशिष्ठजी को खूब तंग किया, उनके पुत्रको भी क्रोधमें आकर मार डाला तो भी उनके हृदयको शान्ति नही मिली। भगवती अरुन्धती पुत्र-शोकमें बहुत रोती कलपती रही किन्तु तो भी विश्वामित्रको शाप नही दिया। धन्य क्षमाशीला सती! तुम्हारीही इस क्षमाशीलतासे क्षमा अपना नाम सार्थक कर सकी है। भारतकी पवित्र गोदमें पलकर तुम्हारी जैसी सती स्त्रियोंने माताके दूधकी

लाज रख ली है। स्त्रियोंका क्षमाशीला होनाही सौभाग्यका लक्षण कहा जाता है।

महर्षि वशिष्ठने भी पुत्र-घाती विश्वामित्रको क्षमा कर दी, किन्तु तो भी उनके हृदयकी द्वेषाग्नि ठंढी नहीं हो पायी। घोर तपस्या कर अच्छी स्थिति प्राप्त करनेपर भी उनके हृदयमें वशिष्ठ जीको सतानेकी इच्छा बनीही रही।

एक दिन महर्षि वशिष्ठ अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीके साथ आश्रममें बैठे आपसमें इस प्रकार बातें कर रहे थे।

अरुन्धती—नाथ! इन दिनो ऋषियोमें अधिक चमत्कारी तेजस्वी कौन ऋषि है?

वशिष्ठ—इसके लिये तुमको दूर नहीं जाना होगा। अभी ऋषि श्रेष्ठ विश्वामित्रजीका तपबल प्रशंसनीय है। उनका चरित्र बड़ाही निर्मल है।

अरुन्धती—जो हो किन्तु मुझको आपसे बढ़कर कोई दूसरा नहीं दिखाता।

वशिष्ठ—तुम पतिव्रता सती हो, इसलिये तुमको ऐसा मालूम होता है। पतिव्रताओंकी दृष्टिमें पतिसे श्रेष्ठ कोई नहीं जंचता। अतएव तुम जो कुछ देखती हो वह पतिव्रताओंकी स्वाभाविकता के कारण है, किन्तु इसको भी स्मरण रखो यह संसार है इस में एकसे एक उत्तम रत्न छिपे पड़े हैं। ऋषियोंमें भी अनेक ऐसे हैं जो अपनी समता नहीं रखते।

अरुन्धती—उनमेंसे किसी दो चारके नाम तो बताइये।

वशिष्ठ—कहा तो इसके लिये दूर नहीं जाना होगा चिर-परिचित विश्वामित्रजीको ही देखो। उनके समान तेजस्वी ऋषि बहुत कम होंगे।

जिस समय दम्पत्तिमें इस प्रकार बातें होरही थीं उस समय तलवार हाथमें लिये विश्वामित्रजी वशिष्ठजीको मारनेके लिये आश्रमकी लताओंकी आड़में छिपकर सब सुन रहे थे।

दम्पत्तिकी बातें ध्यान पूर्वक सुनने बाद एकाएक वे वशिष्ठजी के आगे उपस्थित हो, तलवार फेंक, चरणोंपर गिरकर बोले—"ऋषि राज वशिष्ठजी! मैं आजतक भूलमेंही पड़ा हुआ था। आपको अभीतक पहचान नहीं सका था। अभी मैं आपका गला काट-नेके लिये अन्धेरेमें छिपकर यहाँ आया था। किन्तु आपकी बातोंसे मेरी आँखें खुलीं। आप साक्षात क्षमा रूप हैं। आपके गुणोंका वर्णन मैं नहीं कर सकता। आपकी धर्मपत्नी भगवती अरुन्धतीकी स्वामि-भक्ति किसी पतिव्रतामें नहीं पायी जाती है। आपके चरणोंमें कोटि कोटि प्रणामके पश्चात निवेदन है कि मेरी त्रुटियोंपर ध्यान न देकर पिछले अपराधोंको क्षमा कीजिये।"

वशिष्ठजीने बल पूर्वक विश्वामित्रजीको उठा गलेसे लगा-कर कहा—"ऋषि श्रेष्ठ विश्वामित्र! आप शान्त हों।"

विश्वामित्र—मैंने आपका बहुत अनिष्ट किया है अतएव जब तक आप मुझे क्षमा न करदें तबतक आपका चरण कमल छोड़ूँगा नहीं।

वशिष्ठ—महर्षि विश्वामित्रजी ! विश्वास रखें मेरे हृदयमें पहली बातोंकी चोट नही हैं और न कभी उस ओर ध्यानही दिया करता हूँ । आप जिसके लिये क्षमा प्रार्थी हैं उसका लेश मात्र दुख मेरे मनमें नही है ।

विश्वामित्रजी अरुन्धतीके आगे हाथ जोड़ बोले—"सती मेरे व्यवहारसे तुम्हारे हृदयको बहुत दुःख हुआ होगा मैंने द्वेष-बुद्धिमें पड़कर, क्रोधके वशीभूत हो, तुम्हारे पुत्रको संहार किया । यद्यपि मेरा यह अपराध अक्षम्य है किन्तु सतियोंकी दयालुताके आगे यह भी मार्जनीय है । आशा है इस अकारण क्रोधीकी प्रार्थनापर ध्यान दोगी ।"

अरुन्धती शान्त स्वरमें बोली—"ऋषिवर ! आप स्वयं सज्ञान है,आपसे इस विषयमें और क्या कह सकती हूँ ? आप अपने किये पर पश्चात्ताप करते हैं, आपके लिये यही प्रायश्चित है । अकालही में पुत्रके स्वर्गवास हो जानेका दुःख मुझको आवश्यक है किन्तु इसके लिये आपको दोषी नहीं ठहराती । जीव अपनी करणीका फल पाया करता है । पूर्व जन्ममें मेरा ऐसा कोई दुष्कर्म अवश्य होगा जिसके फल स्वरूप यह यातना भोगनी पड़ी ।"

विश्वामित्र—धन्य सती ! तुम्हारी क्षमा अनुकरणीय है । ईश्वर करे तुम्हारे जैसी स्त्रियोंसे देश पूर्ण हो, तभी संसारकी यथार्थ भलायी होसकेगी ।

कुछ समयतक महर्षि वशिष्ठके साथ बातें करने बाद विश्वामित्रजीने उनसे विदाकी आज्ञा मांगी । वशिष्ठजीने बड़े स्नेहसे

उन्हें गले लगा विदा किया। मार्गमें विश्वामित्रजी दम्पत्तिकी प्रशंसा आपही आप करते आश्रमको लौट आये।

पतिव्रता अरुन्धतीके पुनीत यशकी गाथा संसारमें विख्यात होगयी। अनेक आर्य महिलायें उनकी पवित्र और अनुकरणीय संगतिसे अपने नारी जन्मको सार्थक कर सकीं।

लेखक-पं० चन्द्रशेखर पाठक ।

भारती उपन्यास-जगतका शिरमौर्य, पवित्र प्रेमका भरा हुआ लबालब प्याला, सुख-दुःख, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्यकी कसौटी, समाज-चित्र दिखानेका बायस्कोप, सहोदर-सम्बन्धकी सुन्दर तस्वीर, आदर्श चरितोंकी खान, सेवा-भावका खजाना और ग्राम्य जीवन-का सजीव चित्र है। यदि आपको भारतीय रमणियोंका उज्वल आदर्श देखना हो तो भारती देखिये। पश्चिमीय शिक्षा प्राप्त ललनाका चरित्र देखना हो तो भारती देखिये। सच्चे और केवल कामवासनाको तृप्त करनेवाले प्रेमका दृश्य देखना हो तो भारती देखिये। भातृ-प्रेमकी उज्वल चांदनी देखनी हो तो भारती देखिये। गृह-कलहका कारण और निवारणका उपाय जानना हो तो भारती पढ़िये। भारतीय ग्रामोंमें फैले हुए कालका विकट चीत्कार और उसके गालमें पड़े हुए ग्रामवासियोंका हाहाकार सुनना हो तो भारती देखिये। धनमें मत्त राय साहबकी कठोर नीतिका परिणाम देखना हो तो भारती देखिये। पुलिसकी चाल, प्राचीन सभ्यताका प्रभाव, नवीन सभ्यताका आकर्षण,

कर्त्तव्य और हलका झगड़ा देखना हो तो भारती देखिये। भारतीमें सब कुछ है। नारी चरित, प्रेम-लीला, काम-लीला सभी विषयोंका नीर क्षीर विवेचन है और सबसे बड़ी चीज़ है—भारतीका आत्म-त्याग, भारतीका सेवा-भाव, भारतीका हृदय। डाकुओंके उपद्रवके कारण धनी-कुलकी कन्या भारतीका भागना, भैरवीसे भेंट होना, प्रेम-भवनका अद्भुत दृश्य, जन-सेवामें अवतीर्ण होना, दिग्विजयकी आदर्श लोक-सेवा राय साहबका बात बातपर अहंकार और धन गर्व दिखाकर गरीबोंको पीस डालनेकी चेष्टा करना, क्षण क्षणमें पहिवर्त्तन क्रोधावेशमें अपनी गृहस्थीको अशान्तिका आगार बना डालना महेशनारायणके मनो-भावोंका परिवर्त्तन भ्रातृ-वत्सलता, दारोगा साहबकी कूट नीति, भारतीपर आसक्त होकर अत्याचार करनेकी चेष्टा करना, पर वहाँ पराजित होना। अँग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त राय साहबकी कुल-वधु सौदामिनीका अद्भुत चरित्र, उसके साथियोंका ऐसे कुराह पर ले जानेकी चेष्टा पर सौदामिनीका विलक्षण चरित्र बल आदि ऐसी ऐसी घटनायें लिखी हैं. कि पढ़ते-पढ़ते कभी हृदय काँपने लगता है। कभी दुःखियोंकी दुर्दशा देखकर रो उठता है। सारांश यह कि भारती भारतके उपयुक्त है। भारती भावोंसे भरी है। इसीलिये भारती छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष, विवाहित अवि-वाहित, सबके पढ़ने और मनन करने योग्य है। सुन्दर सुन्दर ६ एकरंगे तथा तीनरंगे चित्रोंसे सुशोभित ४०० पृष्ठोंकी पुस्तक-का मूल्य २॥) । रेशमी जिल्द ३) ।

यह बेजोड़ ग्रन्थ अभी अभी छापकर तैयार हुआ है। यह वही ग्रन्थ है जिसको प्रकाशित करानेके लिये हिन्दी साहित्य सम्मेलनके "अधिकारीगण" सिर तोड़ चेष्टा कर रहे थे और जिसके लिए हमारे पास सैकड़ों आर्डर आकर पड़े हुए थे। लोगोंके तगादेपर तगादे सहन करने पड़ते थे। हिन्दी प्रेमियों तथा अपने सहृदय ग्राहकोंकी आशा पूर्ण करनेके लिएही हमने बहुतसा धन व्ययकर इस पुस्तकको प्रकाशित किया है। इस पुस्तकके निकालनेसे हमारा एकमात्र उद्देश्य यही है कि हिन्दी भाषामें अच्छे सम्पादकों तथा लेखकोंकी संख्या बढ़े। समाचार-पत्रोंके सम्पादकोंका क्या कर्त्तव्य है, उन्हें किन किन बातोंपर ध्यान देना चाहिये और किन किन पुस्तकोंको किस प्रकारसे पढ़ना चाहिये। अच्छे लेखों तथा अच्छी पुस्तकोंको कैसे लिखना तथा चित्ताकर्षक और मनोरञ्जन बनाना चाहिये। पत्रों तथा पुस्तकोंने किस प्रकार जन्म लिया। भारतमें प्रेस एक्टके कारण

पत्रोंकी कैसी शोचनीय दशा है। यह सब बातें अच्छी तरहसे दर्शायी गई हैं। इस पुस्तकके पढ़नेसे थोड़ीसी हिन्दी जाननेवाले मनुष्य भी पत्रसम्पादन कार्य तथा पुस्तक लिखना और पुस्तकों तथा लेखोंका मर्म पहचानना सीख सकते हैं। जिन लोगोंको सम्पादक अथवा लेखक बननेका शौक या साहित्य प्रेम हो, वे इस पुस्तकको मंगाकर अवश्य पढ़ें और बारबार पढ़ें। भाषा इतनी सरल तथा रोचक है, कि साधारण हिन्दी जाननेवाले भी इसे समझ सकते हैं। हम दावेके साथ कह सकते हैं कि पं० नन्दकुमारजी देवशर्माने इस विषयकी पहली पुस्तक लिखकर हिन्दी भाषा भाषी समाजका बड़ा उपकार किया है। पुस्तक इस विषयके अनेक पुस्तकोंको वर्षों अध्ययन करनेके पीछे १२ अध्यायोंमें बांट कर लिखी गई है। पुस्तक जितनी उपयोगी है, उतनी ही मनोरम भी है। हिन्दी प्रेमियोंको एकबार इसे अवश्य पढ़नी चाहिये, कलकत्ता समाचार।" "इसमें प्रत्येक मनुष्यके कामकी बातें प्राप्त होंगी। लेखक महाशयने ऐसे महत्व पूर्ण विषयपर लिखकर समाजका बड़ा उपकार किया है। आज" आदि भारतके प्रायः सभी हिन्दी पत्रोंने इस पुस्तककी मुक्त कण्ठसे प्रसन्साकी है। पुस्तक देखने और मनन करने योग्य है। हिन्दीमें इस जोड़की पुस्तक दूसरी नही छपी। बढ़िया एण्टिक कागजपर छपी हुई बड़ी पुस्तकका दाम सर्व साधारणके सुभीता हेतु लिये केवल मूल्य १) रखा गया है।

आदर्श माता

यह एक सामाजिक उपन्यास है। यदि आप आर्य्यावर्त्तकी आदर्श रमणियोंके आचार, विचार, उनकी देशरक्षक पुकार, दुर्भिक्षसे तड़पते हुए असंख्य मनुष्योंको प्राणदान, बालकोंकी वास्तविक शिक्षा, सेवककी स्वामि-भक्ति, कट्टर शत्रुका भी आदर आदि अनेक रोमाञ्चकारी दृश्योंके आनन्दका अनुभव करना चाहते हों, यदि आपको ऊँचे दर्जेके दिलचस्प उपन्यास पढ़नेका शौक हो, तो हम आपको सलाह देते हैं कि इस उपन्यासको एकबार अवश्य पढ़िये। सचित्र पुस्तकका मूल्य ॥।)।

स्वराज्यकी माँग

स्वराज्य क्या वस्तु है, यह किन उपायोंसे प्राप्त हो सकता है, इसकी आवश्यकता क्या और क्यों है, नेताओंने असहयोग क्यों और कैसे आरम्भ किया। यह सब बातें इस पुस्तकमे जगत प्रसिद्ध नेताओंके लेखों द्वारा उनकी अपनी ओजस्विनी भाषामें दर्शायी गयी हैं। पढ़तेही हृदयमें देशप्रेमकी बिजली दौड़ने लगेगी और कट्टर देशद्रोही भी देशप्रेमी तथा देशभक्त बन जायगा। इस पुस्तकको पढ़लेसे आप स्वराज्य तथा असहयोगके महत्वको भली प्रकार समझ सकेंगे और देशद्रोही तथा स्वराज्य और असहयोगके दुश्मनोंको मुंह तोड़ जवाब दे सकेंगे। हाफटोनके कई एक चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य १॥)।

यह एक प्रेमरस, वीरता, और निष्ठुरतासे चुहचुहाता हुआ कल्पित ऐतिहासिक उपन्यास है। उपन्यासोंमे शायद ही कोई उपन्यास इसकी बराबरी कर सके। यह उपन्यास शृंगार, करुणा, बीभत्स, करुण-क्रन्दन, परोपकार और प्रेमका भण्डार कहा जा सकता है। प्रेमीकी प्रेमलीला, विलासीकी विलासता, अत्याचारीका भयंकर अत्याचार, दुखियोका आर्तनाद, बहादुर की बहादुरी एवं रमणियोंकी धर्म परायणता, धैर्य्य तथा उनकी वीरता देख आप सन्न हो जायंगे। यह उपन्यास ऐतिहासिक भावको लेते हुए कल्पित रूपमे परिणत किया गया है। फ्रान्स मे नैपोलियनको, इंगलैण्डमे क्रामवेलको, अमेरिकामें जार्जवाशिंगटको, इटालीमें गेरीवाल्डको, राजस्थानमें प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रतापसिंहको और महाराष्ट्रमें जो सम्मान छत्रपति शिवाजीको प्राप्त है, वही सम्मान हमारे इस कल्पित उपन्यासमे वीरवर चञ्चलसिंहको है। इस वीरकी कार्य्य कुशलता देखकर आप दंग हो जायंगे, वीर रमणियोंके करमें रक्त-रञ्जित तलवार एवं दुष्टोंके कटे सर देखकर आपके रोंगटे खड़े हो जायेंगे। अनेक रंग बिरंगे चित्रोंसे परिपूर्ण पुस्तकका मूल्य १।)।

वीर चरितावली ग्रन्थ-माला।

१ **लवकुश**—इस ग्रन्थमें भगवान रामचन्द्रके विश्व-विजयी पुत्र लव और कुशका पूरा वृतान्त बड़ीही ओजस्विनी भाषामें १२ रंग बिरंगे चित्रोंके साथ लिखा गया है। मूल्य १॥।)

२ **महाराणा प्रतापसिंह**—हिन्दू-कुल-सूर्य्य महा-पराक्रम शाली, वीर शिरोमणि, स्वतन्त्रता नामक मंत्रके उपासक प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रतापसिंहके शौर्य्य वीर्य्यका पूरा वृतान्त ७ रंग बिरंगे चित्रोंके साथ दिया गया है। मूल्य १।)

३ **परशुराम**—भगवान परशुरामका सम्पूर्ण वृतान्त बड़ीही सरल भाषामें १५ रंगबिरंगे चित्रोंके साथ लिखा गया है।मूल्य ३)

४ **पृथ्वीराज चौहान**—भारतके अन्तिम सम्राट पृथ्वी-राज चौहानका सम्पूर्ण जीवन चरित्र दिया गया हैं। तीन चित्रोंके साथ पुस्कका मूल्य १।)।

५ **नैपोलियन बोनापार्ट**—यूरोपके साक्षात रण देवता सर्व मान्य महावीर नैपोलियन बोनापार्टका चरित्र चित्रण किया गया हैं। ११ मन हरण चित्रोंके साथ पुस्तकका मूल्य २।)।

६ **भारतके महापुरुष**—इसमें उन ३८ महापुरुषोंका वृतान्त है, जिन्होंने अपनी वीरता, गम्भीरता, कार्य्य पटुता, विद्वता, ज्ञान गरिमा तथा लोक-प्रियतासे सारे संसारको अपनी ओर खींच लिया था। चार खण्डके ५०० पृष्ठोंकी पुस्तकका मूल्य ३)

नाट्य ग्रन्थ मालाका प्रथम पुष्प।
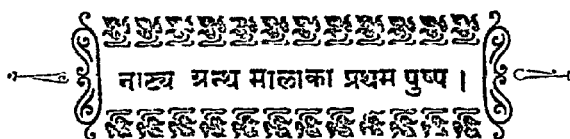
पाप रेखायें दुःखीके, अश्रु ओंसे धुल गईं।

बन्द थी आँखें अभीतक, हिन्दकी वह खुल गईं॥

नाटक क्या है! आजकलका सच्चा चित्र है। इसकी प्रत्येक घटनायें विचित्र हैं। 'यह नाटक अन्धेरेमें भटकते हुए देशवासियोंको पवित्र मार्ग दिखानेके लिए एक जलती मशाल है। इसके प्रत्येक दृश्य आपको चकित कर देंगे और आपके हृदयमें देशानुराग कूट-कूटकर भर देंगे। इसके हास्य-रस युक्त शिक्षाप्रद दृश्य हँसाते हँसाते आपकी नस नसमें देशाभिमानकी बिजली दौड़ा देंगे। इसमें नाट्य-कला-कौशलकी भरमार है, यानी रंगमंचका शृंगार है। नाट्य संस्थाओ और पुस्तकालयोंके लिए यह नाटक बहुतही लाभप्रद है। हिन्द, स्वतन्त्रता, मिस्टर फैशन, नवीनता सत्यपाल, अत्याचार, दुर्भिक्ष, रोगराज, अन्यायसिंह, स्वार्थराज, धनहरणसिंह प्रभृति पात्रोंकी बातें सुन मुर्दा दिलोंमें भी एक विचित्र परिवर्त्तन हो जायगा। बढ़िया एन्टिक कागज पर छपी हुई कई सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित पुस्तकका मूल्य १)।

नाट्य ग्रन्थ-मालाका द्वितीय पुष्प ।

छोड़कर निज कुल-वधूको, कर्मका मारण करें ।
क्यों न उनकी नारियां, गणिका-हृदय धारण करें ॥

नाटक क्या है? वर्त्तमान समयका चित्र दिखानेवाला अद्भुत चमत्कारिक आइना है। इसके हरएक दृश्य आपका चित्ता-कर्षित करेंगे और समयानुकूल बिना रुलाये और हँसाये न रहेंगे। यदि आप सरस्वतीकी पति-परायणता और स्वामि-भक्ति, कमलावतीका धर्म-पालन तथा भ्रातृ-स्नेह, हीरालालके वेश्या-गमनका नतीजा, दुष्ट अभयचन्द तथा उसके साथियोंका भीषण अत्याचार और अन्त-परिणाम, मुन्ना वेश्याके प्रेम-जाल, तथा उसके गुप्त विचार, राय भड़चन्दके गृहकी विचित्र कहानी एवं नाटकके नायक रामदासकी कर्त्तव्य परायणता तथा महान आदर्श स्वामि-भक्ति और उसका पुरस्कार देखना चाहते हों, तो एकबार इस पुस्तकको अवश्य अवलोकन करें। अनेक रंग बिरंगे चित्रोंसे सुसज्जित पुस्तकका मूल्य १।) रेशमी जिल्द १॥) ।
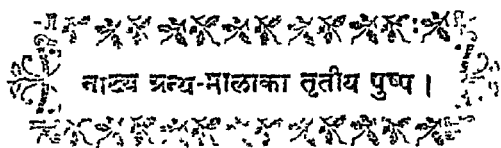
प्रेमही एक रत्न है और प्रेममय संसार है।
प्रेमका करते जो आदर उनकी जय जयकार है॥

नाटक क्या है? मनोरञ्जनकी पूर्ण सामग्री है। प्रेमकी साक्षात प्रतिमा है। करुण-क्रन्दनका आश्चर्य्यकारी पर्वत है। अनेक नाट्य गुणोंसे यह प्रहसन परिपूर्ण है। मिस्टर शैटो का अहंकार पूर्ण वर्ताव, निताईको वृद्धावस्थामें शादीकी लालसा, शान्तिका प्रशंसनीय प्रेम, रूमाल पर कल्पित आडम्बर, जामिनी नामपर सन्देह कर परस्पर पति-पत्नीमें फूटका बीज, नपरा नामक दासीका भीषण षड़यन्त्र, अन्तमें रेशमी रूमाल तथा जामिनीका भण्डा फोड़ आदि दृश्य देखकर आप चकित हो जायंगे। इस प्रहसनको कलकत्तेकी प्रायः सभी कम्पनियां समय समयपर खेल कर जनताका खूबही मनोरञ्जन करती और साथ ही लाखों रुपये पैदा करती हैं। इसकी बंधाई कटाई और कावरका चित्र ही देखकर आपका दाम वसूल हो जायगा। रंग बिरंगे चित्रोंसे सुसज्जित पुस्तकका मूल्य ॥)।

भक्त तुलसीदास

आज भी जिन तुलसीदासके ग्रन्थसे हिन्दी साहित्यका मस्तक ऊँचा होरहा है। जिनकी रामायण आज भी यह घोषणा कर रही है कि भारतवर्ष आदर्शकी खान है। गोस्वामी तुलसीदासकी समताका विद्वान अभीतक भी किसी साहित्यमें नहीं पाया गया। प्रस्तुत पुस्तकमें उन्हीं महापुरुषका चरित्र-चित्रण नाट्य रूपमें किया गया है। गोस्वामीसे श्रद्धा रखनेवाले प्रत्येक व्यक्तिको इसकी एक एक प्रति अवश्य मंगाकर रखनी चाहिये। घटिया कागजकी पुस्तकका मूल्य ॥≈) और बढ़ियाका ॥|) है।

भक्त चंद्रहास

यह नाटक पौराणिक, राजनैतिक, धार्मिक और सामयिक घटनाओंसे भरा हुआ है। जिस समय यह रङ्ग मञ्च पर अभिनीत होता है, जनता चित्रवत हो जाती है। सचित्र पुस्तकका मूल्य १|) रङ्गीन १॥) और रेशमी जिल्द १॥|)

भारत रमणी

यह नाटक सुन्दर कविताओं और मनोहर गायनोंसे भरा हुआ है। इसका हरएक दृश्य पढ़कर आप खुश होंगे। एक भारतीय बालकका पहले मातृभक्त, फिर स्त्रीभक्त, फिर वेश्याभक्त होकर शराब आदि दूषित कर्मो द्वारा अपनी सब सम्पत्ति नष्ट कर अन्तमें शराबके लिए एक लोटा चुराकर भागना और पुलिस द्वारा पकड़े जाना। मूल्य १|) रेशमी जिल्द १॥)।
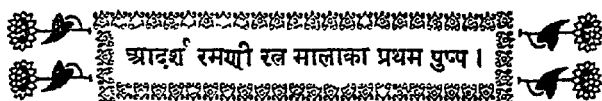
पतिव्रता अरुन्धती

कुमारी कन्याओं और नव विवाहिता स्त्रियोंके लिए यह पुस्तक बड़ी ही शिक्षाप्रद और उपयोगी है। इसमे सती शिरोमणि देवी अरुन्धतीकी वही पुण्यमय पवित्र कथा है, जो युग युगान्तरसे सती रमणियोंका आदर्श मानी जाती है। इनकी कथा इतनी मनोरञ्जक, हृदय ग्राही, शिक्षाप्रद और पवित्र है कि स्त्रियोका मन, प्रान उनके अनुकरणकी ओर आपसे आप झुक जाता है। अरुन्धतीका पुर्नजन्म, सतीका सतीत्व, मनोरमाकी माया, तपोवन भ्रमण आदि दृश्य पढ़ने योग्य हैं। विश्वामित्रका अहंकारपूर्ण वर्ताव, सतीबालाके आराध्यदेव ऋषिश्रेष्ठ वशिष्ठकी कर्तव्य शीलता, नन्दिनीके हरणमें ब्रह्मतेजकी महत्ता विश्वामित्रका राज्य भार त्याग और तपमें प्रवृत्त हो प्रतिहिंसाकी आगसे धधककर वशिष्टके पुत्रका हनन करना, अन्तमें छिपकर वशिष्ठको अपनी प्रशंसा करते सुनकर लज्जित होना तथा उनका आश्रय ग्रहण कर क्षमा भिक्षा मांगना आदि देखने और पढ़ने योग्य हैं। लड़कियोके स्कूलोमें इनाम देने और पुस्तकालयोंमे संग्रह करने योग्य होनेके कारण धड़ाधड़ बिक रही है। रंग बिरंगे चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य ॥≋)।
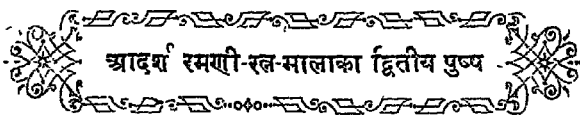
सती सीमंतिनी

इसमें महाराज चित्रवर्माकी सुशीला कन्या या महाराज नलके पौत्र कुमार चन्द्रांगदकी अर्धाङ्गिनी सती सीमंतिनीके पातिव्रत्य-कथाका चरित्र-चित्रण किया गया है। सती-कुल-शिरोमणि सीमंतिनीका चरित्र किसी भी पतिव्रतासे कम दर्जेमें नहीं है। सती सावित्रीकी तरह इस सती बालाने भी अपने पातिव्रत्यके प्रभावसे पतिको पुनर्जन्म दिलाया था। इस पुस्तकमें रहस्यभरी, गुणभरी, मतिभरी और आदर्शभरी अनेक ललित घटनायें हैं। सती सीमंतिनीने अलौकिक लीला और आदर्श पतिपरायणतासे उस युगमें सर्वोच्च-पद प्राप्त किया था। हिन्दू बालक, बालिकाओं और गृह-लक्ष्मियोंके पढ़ने तथा पुस्तकालयोंमें संग्रह करने योग्य अपने ढंगकी निराली और अति उत्तम पुस्तक है। क्या भाषा, क्या भाव, क्या विषय, क्या कागज, क्या छपाई, क्या चित्र सभी के लिहाजसे यह पुस्तक अपूर्व है। जो लोग स्त्रीशिक्षाके पक्षपाती नहीं हैं वे आखें उठाकर इस पुस्तकको अवश्य मंगाकर पढ़ें। सीमंतिनीका अपूर्व धर्मानुराग, उज्वल सतीत्व और अविचल धैर्यकी कथा पढ़कर आत्मामें अलौकिक बलका सञ्चार होता है। रंग बिरंगे चित्रोंके सहित पुस्तकका मूल्य ॥।)।

आदर्श रमणी-रत्न मालाका तृतीय पुष्प
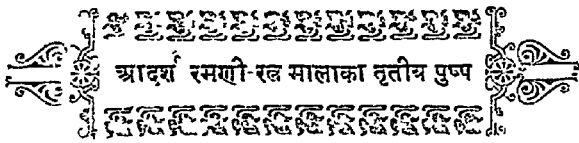
सती सुलक्षणा

यह देवलोक और मृत्यु लोकका चित्र दिखानेवाली शिक्षा-प्रद सुललित और हृदय-ग्राही अपूर्व कथा है। सती सुलक्षणा हिन्दी संसारकी बिलकुल अपरचिता, पौराणिक समयकी घनघोर घटा, भाव और भाषाकी अद्भुत छटा देखने और पढ़ने योग्य है। स्त्री शिक्षाका अपूर्व उदाहरण, पातिव्रत्यका ज्वलन्त प्रमाण, धर्म तथा सत्यव्रतका सुन्दर भण्डार, और सती सतीत्वका चमत्कार है यह वही सतीबाला है जिसने अपने कुष्ठ रोग पीड़ित पतिकी तन, मनसे अपूर्व सेवा की थी। जिसने पतिकी इच्छा पूर्तिके लिए एक वेश्याके यहां दासीका कार्य कर उसे प्रसन्न किया था। जिसने ऋषिश्रेष्ठ माण्डव्यके श्रापसे अपने पतिको सुर्योदयके पूर्व मरते देख पातिव्रतके तेजसे सुर्य्योदय ही बन्द कर दिया था। देवताओंका आर्तनाद एवं सती अनुसूयाके उपदेशसे सूर्य्योदय कराया और अपने पूज्यपतिको निरोग एवं मृत्युके मुखसे साफ बचा लिया। इसमें सती अनुसूयाके उपदेश आर्य्य ललना-ओंके लिए अनुकरणीय हैं। यह पुस्तक लड़कियोंको उपहार देने और पुस्तकालयोंमें संग्रह करने योग्य अति उत्तम वस्तु है। रंग बिरंगे चित्रोंसे परिपूर्ण पुस्तकका मूल्य ॥) ।

पतिव्रता रुक्मिणी
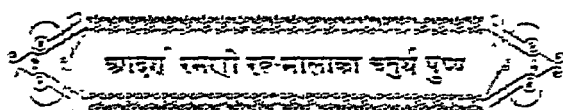
महिला संसारका शृंगार, प्रेम, भक्ति, शान्ति-जल-पूर्ण सरितासे भूषित अलंकार भगवान श्रीकृष्णचन्द्रकी हृदेश्वरी पतिव्रता रुक्मिणीका चरित्र कौन नहीं पढ़ना चाहेगा। इस पुस्तकमें इसी सती साध्वीका चरित्र-चित्रण किया गया है। इसमें श्रीकृष्ण और रुक्मिणीका अगाध प्रेम देखकर आप प्रेम-सागरमें गोते खाने लगेंगे। रुक्मिणीके विवाहमें रुक्मीकी क्रूरता, रुक्मिणीका पत्र, शिशुपाल आदि राजाओंका रुक्मी हरणमें अकारण क्रोध और घमासान युद्ध, प्रद्युम्न जन्म, रुक्मी वध आदि वृत्तान्त पढ़नेसे पति-भक्ति क्या पदार्थ है, अलौकिक प्रेमका कैसा रहस्य और चमत्कार है, पुस्तकके देखनेसे मालूम होगा। आदिसे अन्ततक भाव और विषय बड़ी ही सुन्दर और सरल भाषामें लिखी गई है। हम दावेके साथ कह सकते हैं कि यह पुस्तक कन्या, गृहिणी, कुल वधुओंके लिए तथा पुस्तकालयोंमें संग्रह करने योग्य अति उत्तम है। यदि आप चाहते हैं कि घर घर, गांव गांवमें आदर्श दम्पति, आदर्श गृहस्थ, आदर्श समाज और आदर्श गृहिणी और आदर्श महात्मा नजर आवें तो इस पुस्तकको अवश्य मंगाइये। अनेक रंग बिरंगे चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य ।ℓ) ।